Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

॥ ओ३म् ॥

जन ज्ञान

[साप्ताहिक]

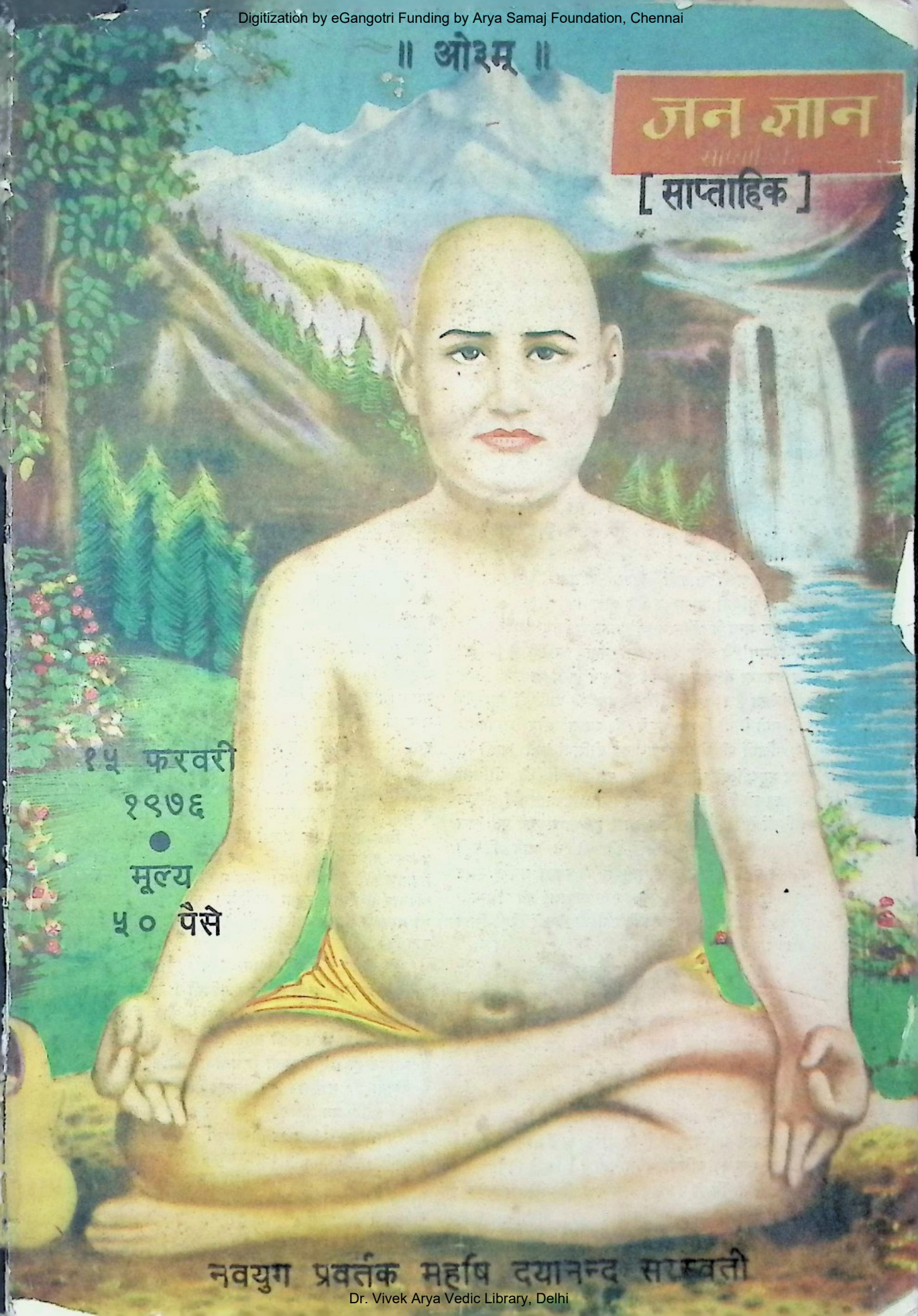

१५ फरवरी
१९७६
●
मूल्य
५० पैसे

नवयुग प्रवर्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वेदोपदेश

—आचार्य पं० प्रियव्रत वेद वाचस्पति

विश्व प्रेम की झांकी

जनं बिभ्रती बहुधा विवाचसं नानाधर्माणं पृथिवी यथौकसम् ।
सहस्रं धारा द्रविणस्य मे दुहां ध्रुवेव धेनुरनपस्फुरन्ती ।।

अथर्व० १२ का० १ सू० ४५ म०

अर्थ—(पृथिवी) यह पृथ्वीमाता (विवाचसं) विविध प्रकार की बोली वाले (नानाधर्माणम्) नाना प्रकार के धर्मों वाले (जनं) प्राणि मात्र को (यथौकसम्) एक घर की तरह (बहुधा विभ्रती) बहुत रूपों में धारण करती हुई (मे) मेरे लिये (द्रविणस्य) धन की (सहस्रं धारा) हजारों धारायें (दुहाम्) दोहन करे अर्थात दे (इव) यथा (अनपस्फुरन्ती) बिना झुंझलाये (ध्रुवा धेनुः) शांत और स्थिर गाय (देती है) ।

इस मन्त्र में निम्न बातें दर्शायी गई हैं—

१. विविध भाषा-भाषी तथा नाना धर्म वालों में परिवारिक दृष्टि ।

२. हजारों धाराओं में ऐश्वर्य का हमारी ओर बहाना ।

३. पृथिवी का ध्रुवा धेनु होना ।

इस मन्त्र में 'विवाचसम्' 'नानाधर्माणम्' 'जनम्' और 'यथौकसम्' ये चार शब्द बहुत महत्व रखते हैं । और इस प्रकरण में 'जनम्' शब्द का अर्थ है, प्राणीमात्र, जोकि जन्म लेता है । इस प्राणि जगत् की वाणियों के भाषा शास्त्रियों ने दो विभाग किये हैं व्यक्त और अव्यक्त । पशु-पक्षियों की बोलियां अव्यक्त बोलियां कही जाती हैं और मनुष्यों की व्यक्त । इन पशु-पक्षियों की बोलियां अव्यक्त तो हैं, परन्तु तो भी इनकी अव्यक्त अर्थात् अस्पष्ट बोलियों से किसी अंश तक इनके हृद्गत अनुभव पता चल ही जाते हैं । इन पशु-पक्षियों की भी न जाने कितनी असंख्य बोलियां हैं । दूसरी मनुष्यों की व्यक्त अर्थात् स्पष्ट बोलियां हैं । मनुष्यों में देश भेद से भाषाओं की भिन्नता तो होती ही है । परन्तु एक देश में भी सैकड़ों भिन्न-भिन्न भाषायें पाई जाती हैं ।

इस तरह से वेद में बताया गया है कि पृथ्वी पर विविध भाषाओं का होना अत्यन्त स्वाभाविक है । दूसरा शब्द इस मंत्र में आया है "नानाधर्माणम्" यहां धर्म शब्द बहुत व्यापक अर्थ में प्रयुक्त हुआ है । धर्म का अर्थ है प्रकृति अर्थात् प्रत्येक प्राणि का अपना-अपना वास्तविक स्वभाव । केवल वाणी में ही यह विविधता नहीं अपितु प्राणी-प्राणी की प्रकृति में भी भिन्नता पायी जाती है । उदाहरणार्थ मनुष्य समाज पर दृष्टि डालें तो पता चलेगा कि हर एक की रुचियों में भिन्नता है । किसी को मिष्टान्न प्यारा है तो किसी को कंद मूल फल ही प्यारे लगते हैं । किसी को ऊंचे-ऊंचे राजप्रासाद मोह लेते हैं तो किसी दूसरे को पर्वतों और नदियों के संगम पर बनी हुई तपो-भूमियां ही आकर्षित करती हैं । कहने का तात्पर्य यह है कि "भिन्नरुचिर्हि लोकः" मनुष्यों की रुचियां भिन्न-भिन्न हैं । हर एक के अपने-अपने स्वभाव हैं । किसी को कि चीज से शांति मिलती है तो किसी को किसी दूसरी चीज से । इस प्रकार अपने-अपने स्वभावों के अनुसार ही मनुष्यों ने धर्म के रूप में कुछ नियम धारण किये हुए हैं । इसलिये पृथ्वी पर नाना धर्मों का होना भी अत्यंत स्वाभाविक है । वास्तव में विविधिता ही इस प्रकृति का सौंदर्य है । सृष्टि में यदि विविधता न हो तो सृष्टि अपनी स्थिरता रख सके । परन्तु यह विविधता होते हुए भी सारी सृष्टि में एक सूत्र पिरोया गया है जोकि विविधता को एकरूपता और अनेकता को एकता में धारण किये हुए है । इसी तत्व को बतलाने के लिये अगला शब्द है "यथौकसम्" अर्थात् एक घर की तरह । कैसा अत्युत्तम सार्वभौम बंधुत्व का एक आदर्श चित्र खींचा गया है । यह पृथिवी माता भिन्न-भिन्न बोलियों वाले, नाना धर्मों वाले प्राणि-मात्र को पुत्र के समान अपनी गोदी में आश्रय दे रही है । इसलिये मनुष्यों को यह उपदेश दिया गया है कि चाहे वे कोई सी बोली बोलने वाले हों, किसी भी धर्म को मानने वाले हों और चाहे किसी भी देश के रहने वाले हों आपस में भ्रातृत्व प्रेम से रहना चाहिये ।

जिस प्रकार एक आदर्श परिवार में सब भाई बहिनें परस्पर बड़े प्रेम से रहते हैं और एक दूसरे की उन्नति में सहायक होते हैं उसी प्रकार हम सब को भी इस पार्थिव परिवार में प्रेम से रहना चाहिये । परमपिता परमात्मा भी मन्त्र में आये "यथौकसम्" द्वारा हमें यही उपदेश दे रहा है ।

इस विश्व प्रेम की भावना से परिपूर्ण भक्त पृथ्वी-माता से प्रार्थना करता है कि हे पृथिवी ! तू मुझे हजारों धाराओं से धन दे । मेरे घर में चारों ओर से हजारों धाराओं के रूप में धन की वर्षा हो रही हो । मेरे यहां धनप्लावन हो । ऐसी पृथ्वी से प्रार्थना की गई है । पृथ्वी से मांगना यह अलंकार है । वास्तव में पृथ्वी से मांगने का तात्पर्य है कि जब हमारे में विश्व प्रेम की भावना भरपूर होगी । पारिवारिक दृष्टि होगी तो सब एक दूसरे की उन्नति में सहायक होंगे । एक मनुष्य की उन्नति के लिये चारों ओर से जब प्रयत्न होंगे तो स्वतः ही चारों ओर से ऐश्वर्य की वृष्टि होगी । इसी को वेद मंत्र ने 'सहस्रधारा' के रूप में दर्शाया है ।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जन - ज्ञान

साप्ताहिक

सम्पादक
राकेश रानी

सह-सम्पादक
आभा

दूरभाष : ५६६६३९

पता :
१५९७, हरध्यानसिंह मार्ग
[निकट ३१-नाईवाला]
करौल बाग, नई दिल्ली-५

वार्षिक मूल्य २०)
विदेश में ४ पौंड : हवाई डाक से
२ पौंड : समुद्री डाक से
—(आजीवन ३०१)—

वर्ष १ : अंक १

प्रथम अंक
वसन्त पंचमी : सम्वत् २०३२

एक नया चरण .....

चल पड़े हैं हम, एक नया बोझ उठा कर, प्रभु के विश्वास पर, आपके भरोसे, बिना साधनों और पूर्व घोषणाओं के.....

परिणाम आपके हाथ में है, यह जन-ज्ञान साप्ताहिक रूप में ! तूफान है, आंधी है, संकट, विघ्न, बाधाएं हैं फिर भी चलने का और आगे बढ़ने का निर्णय हमने ले लिया है।

वर्तमान को बदलना, भविष्य का शृंगार, और भूत से सीखना हमारा लक्ष्य है। देव दयानन्द के दिव्य स्वप्नों को हम देख रहे हैं। उनका अधूरापन हमें चुनौती दे रहा है और हमने यह चुनौती स्वीकार कर ली है।

अग्निमीले पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्। होतरं रत्नधातमम ॥

वही हमारा नेता है, वही पुरोहित है, उसी की आज्ञा से हमने यज्ञ आरम्भ कर दिया है। दिशाओं के सूनेपन को आशा के संगीत से गुंजाने के लिये हम चल पड़े हैं।

प्यार, श्रद्धा, स्नेह, उत्साह और उमंग से अंधेरे में नया सूर्योदय करने में हम समर्थ हों। अनेकता को एकता में बदलने का हमारा प्रयत्न रंग लाए और क्रांति से शान्ति मंत्र का निर्माण हम कर सकें। यह हमारी साध है।

शहीदों ने गाया था—**मेरा रंग दे वसन्ती चोला।**

और उसी वसन्त पंचमी के दिन हमारा यह प्रथम चरण आरम्भ हो रहा है। धरती पर अमृत बरसे, विष प्रभाव समाप्त हो, मनुष्य मनुष्य बने और यह संसार एक घर हो, सभी मिल कर रहें, मिल कर चलें, दुःख सुख बांटते आनन्द की गंगा में स्नान कर सकें, तो फिर स्वर्ग हमारे घर आंगन में होगा।

हम ऋषि दयानन्द के सैनिक हैं। हमें गुरुदेव पर अभिमान है। उनके जीवन का प्रत्येक क्षण हमारे लिये प्रकाश स्तंभ है अतः हमारा जो कुछ भी प्रयत्न है वह देव दयानन्द के लिये है। उसी के लिये जीना और मरना हमारी एक मात्र कामना है।

आज नारों का, घोषणाओं का, योजनाओं और प्रदर्शन का समय नहीं, अब तो कुछ करना होगा, या मरना होगा। प्रत्येक व्यक्ति के मन मस्तिष्क को बदलना है। नया संसार बनाना है। इसलिये आओ, अब काम करें। काम, केवल काम ही हमें विजय वरण का अधिकार देगा।

आज आवश्यकता है ऐसे व्यक्तियों की, जो नींव के पत्थर बनकर अपने को मिटा सकें। कोई उन्हें जाने या न जाने पर धरती को नया आलोक देने में वे ही समर्थ हो सकेंगे।

आशीर्वाद दीजिये, कि साप्ताहिक का यह आरम्भ विश्व के लिए वरदान बन सके। सत्य का अमर संदेश हम गुंजा सकें और वह दिन शीघ्र आये जब हम—वे और सब मिल कर—**सत्य की जय, धर्म की जय वेद की जय, सबल स्वरों में बोल** सकें। हमारे साथ वे आएं जो 'दयानन्द को जय' के लिये मर सकें और जी सकें ! प्रभु हमें बल दो कि जीवन की अंतिम सांस तक हम लक्ष्य के लिए काम करते रह सकें। —**भारतेन्द्रनाथ**

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जन-ज्ञान साप्ताहिक के संबंध में आवश्यक सूचनाएं

१. बिना किसी पूर्व घोषणा के हम इस अंक से जन-ज्ञान साप्ताहिक का प्रकाशन आरंभ कर रहे हैं।

२. जन-ज्ञान (मासिक) के सभी सदस्यों को जन-ज्ञान साप्ताहिक का सदस्य बना लिया गया है। और उन का शुल्क जितने समय का मासिक का जमा था, उतने समय के लिए साप्ताहिक का मान लिया गया है।

३. जन-ज्ञान (मासिक) नियमित रूप से प्रकाशित होता रहेगा। अतः उसका शुल्क भी १५ रु० ही रहेगा। पर जो पुराने सदस्य जन-ज्ञान (मासिक) भी मंगाना चाहें वे तुरंत हमें केवल १० रु० और भेज दें। हम १० रु० में उन्हें जन-ज्ञान (मासिक) का सदस्य बना लेंगे। यह सुविधा १५ मार्च, १९७६ तक के लिए रहेगी।

४. जन-ज्ञान (साप्ताहिक) का वार्षिक शुल्क २० रु० रहेगा। ६ मास का शुल्क १२ रु० होगा।

५. जन-ज्ञान (मासिक) के आजीवन सदस्यों को मासिक पत्र नियमित भेजा जाएगा। वे २० रु० भेजकर साप्ताहिक के सदस्य बन सकते हैं।

६. जन-ज्ञान (साप्ताहिक) का आजीवन शुल्क ३०१ रु० रखा गया है पर १५ मार्च, १९७६ तक २०१ रु० भेजने वालों को साप्ताहिक का आजीवन सदस्य बना लिया जाएगा।

७. साप्ताहिक प्रति रविवार को प्रकाशित होगा। और बुधवार को कार्यालय से भेज दिया जाएगा।

८. शुल्क भेजते समय अपनी ग्राहक संख्या पूरा नाम व पता कूपन पर स्पष्ट लिखें। साथ ही यह भी स्पष्ट लिखें कि आप साप्ताहिक, मासिक या अंग्रेजी जन-ज्ञान में से किसका शुल्क भेज रहे हैं।

९. जो व्यक्ति या आर्यसमाजें १२० रु० वार्षिक १५ मार्च तक भेजेंगे। उन्हें १० प्रति प्रति सप्ताह जन-ज्ञान साप्ताहिक की भेजी जाएंगी।

१०. साप्ताहिक में आर्यसमाजों के समाचार सादर आमंत्रित हैं।

११. सभी विद्वानों-कवियों की रचनाओं का भी हम स्वागत करेंगे।

—प्रबन्धक

'वन्दना के स्वर'

नामक काव्य पुस्तिका

मुफ्त प्राप्त करें

आर्यसमाज शताब्दी पर हिन्दी के मूर्धन्य कवियों की ऋषि दयानन्द को श्रद्धांजलियां वन्दना के स्वर में संग्रहीत हैं। इस पुस्तक का विमोचन माननीय प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने २३-१२-७५ को किया था। बढ़िया कपड़े की जिल्द डिलक्स संस्करण : मूल्य १५)

किंतु जो नए सज्जन २९-२-७६ तक साप्ताहिक जन-ज्ञान के २०) भेज कर सदस्य बनेंगे, उन्हें यह अनमोल ग्रंथ बिना मूल्य भेजा जायेगा।

रजिस्ट्री से मंगाने के लिए २) अधिक भेजें।

प्रबन्धक
जन-ज्ञान साप्ताहिक
१५९७, हरध्यानसिंह मार्ग, नई दिल्ली-५

आर्यसमाज शताब्दी पर बांटें

१.	सत्यार्थ प्रकाश	२०० रु० सैकड़ा
२.	संस्कार विधि—१५० रु० सैकड़ा,	२५० रु० सैकड़ा ४०० रु० सैकड़ा
३.	स्वामी दयानन्द जीवन चरित्र	१०० रु० सैकड़ा
४.	व्यवहारभानु	३० रु० सैकड़ा
५.	आर्योद्देश्यरत्न माला	१५ रु० सैकड़ा
६.	स्वमंतव्यामंतव्यप्रकाश	१५ रु० सैकड़ा

दयानन्द संस्थान, नई दिल्ली-५

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वर्ष १ ● वसन्त पंचमी : संवत् २०३२ ● अंक १

प्रथम अंक अर्पित है.....

जीवन के इस कंटक वन में पुष्प खिलाने का व्रत लेकर, हम निकले हैं, कौन हमारा साथी होगा, पता नहीं है। ज्ञात नहीं कुछ, कैसे चलना ? फिर भी बढ़ना, लक्ष्य हमारा। हम जीतेंगे, यह निश्चय है।

प्रथम अंक पुष्पित पराग बिन आपके हाथों में है। भावना बहुत कुछ है, कर्म भी साथ है तो परिणाम भी शुभ होगा, विश्वास है।

शताब्दी वर्ष में हम गुरुदेव के प्रति और क्या श्रद्धांजलि अर्पित करते ? उनके भावों का प्रचार उनके स्वप्न को मूर्त रूप देना ही, उचित प्रतीत हुआ और आपका "जन-ज्ञान" साप्ताहिक हो गया।

१००) पूज्य महात्मा आनन्द स्वामी जी ने दियेथे, उससे जन-ज्ञान मासिक निकला, बढ़ा और दयानन्द संस्थान संगठन बना। श्रद्धेय श्री स्वामी योगेश्वरानन्द जी के आशीर्वाद और वरद् हस्त से सदा शक्ति मिली।

आर्य विद्वानों का, महात्माओं, संन्यासियों का आशीर्वाद मिला। हजारों भाई-बहनों का दूर-पार बैठे भी स्नेह-दुलार-प्यार मिला। दो ने कांटे बिछाए तो हजारों ने फूल बरसाए। कारवाँ बढ़ता गया और इसी बल से बली होकर आज के युग में—बिना पूंजी के साप्ताहिक आरम्भ कर दिया।

हम केवल निमित्त हैं, जो भी काम हो रहा है वह सब प्रभु के, प्रभु भक्तों के सहयोग से हो रहा है। आगे भी होगा। आशाएं हैं, दूर किनारा है, मंजिल लंबी है, फिर भी बढ़ने की उद्दाम लालसा मन में है।

परिणाम की चिन्ता नहीं, इच्छा है सत्य, ऋषि संदेश और वेद के प्रसार की। प्रभु यह इच्छा पूर्ण करें।

भाई और बहनें साप्ताहिक को अच्छा बनाने के लिए उदारता पूर्वक सहयोग दें। जितना सहयोग मिलेगा उतना ही काम हम कर सकेंगे।

लेख, कविताएं, सूचनाएं, चित्र समाचार सभी का स्वागत। आपका, आर्य जनता का अपना पत्र जन-ज्ञान साप्ताहिक अब आपके हाथ में है।

आप इसे जो भी रूप देना चाहें, दे सकते हैं।

—राकेशरानी

आओ, अब काम करें !

नारे बहुत लगा चुके,
भाषण बहुत सुन लिए।
योजनाएं भी पढ़ डालीं,
प्रस्ताव पास कर चुके :
पर गाड़ी खड़ी है,
आगे नहीं बढ़ी है।
धरती रो रही है,
सपने खो रही है।
ऐसे काम कैसे चले,
जीवन कब तक कहो जले।
मौन दर्शक बन कर रहना,
दर्द में तड़पते देखना।
कब तक सहोगे बोलो,
कुछ न करोगे बोलो।
मेरे भाई, ओ ऋषि के सिपाही,
खून ठंडा क्यों हो गया है ?
मैं तुम्हें नहीं पुकारता,
दयानन्द का बलिदान।
लेखराम का खून,
श्रद्धानन्द का गोली लगा सीना और,
हजारों का समर्पण
तुम्हें पुकार रहा है।
धर्म बुलाता है सुनो,
और कुछ काम करो।
घर-घर में जाओ,
वेद की बात बताओ।
ऋषि संदेश सुनाओ,
धर्म के स्वर गुंजाओ।
मैं चल रहा हूं आगे,
तुम भी आ सको तो आओ,
मैं बाट नहीं देखूंगा।
एक पल नहीं रुकूंगा,
विजय के लिए आओ,
धर्म के लिए जाओ।

भारतेन्द्रनाथ

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

मेरा सपना....

राकेश रानी

मैं अंधेरे में उजाले के लिए, मनुहार करती हूँ।
धरा पर स्वर्ग लाने के लिए, झंकार करती हूँ॥

उदासी और निराशा को, जला दो तुम मेरे भाई,
असत् को दूर करना है, मिटानी पाप परछाईं।
तुम्हारी भावना जागे, तुम्हारी कामना जागे,
नया उत्साह उमड़े तो, नया संसार भी जागे।

नए युग की नयी ईंटें, हमें ही तो बनानी हैं,
नया सूरज, नया चन्दा, नए तारे हमें लाने।
सभी कुछ अब बदलना है, खड़ा होना है पर्वत बन,
तूफानों से टकराकर, हमें आगे ही बढ़ना है।

हमें मरकर सजानी है, यह दुनियां फिर सितारों से,
हमें जलकर दिखानी है, नई आशा, नई सरगम।
नया सब कुछ हमें लाना, जलाना पाप का जंगल,
वहानी प्यार की गंगा, सजानी दीप की लौ है।

हमें शृंगार करना है, स्वयं अपना जिसे भूले,
भटकते फिर रहे प्राणी, बिलखते घूमते जग में।
अमरता, साधना, शुचिता, कहाँ है आज जीवन में,
किसे मालूम तुम क्या हो, कहाँ जाना, कहाँ मंजिल ?

हमारी भावना ही तो, हमारे प्राण का संबल,
हमें चलना नहीं आता, मगर फिर भी यह इच्छा है।
चलें हम दूर तक साथी, बदल दें मन की लहरों को,
लहर उठती है मन में कुछ, सभी को लहर मिलजाए।

तुम्हारी याद आती है, अभी तो लक्ष्य बाकी है,
बहुत इच्छा है मिलने की, बड़े अरमां हैं इस मन में।
मगर मंझधार में नैया, अकेले हम, भंवर में हैं,
अभी हिम्मत है बढ़ने की, अभी औसान हैं बाकी।

हमें निर्माण करना है, हमें उत्थान करना है,
रुदन की आ रही आवाज, हमें हँसना सिखाना है।
हमें जीना सिखाना है, हमें मरना सिखाना है,
अंधेरे में उजाले को हमें फिर से सजाना है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

हम और हमारी साधना

—हम वैदिक संस्कृति के प्रति अर्पित हैं। उसका प्रसार ही हमारा जीवन लक्ष्य है।

—क्योंकि हमारी अडिग आस्था है कि उसी की साधना से हमें अजेय शक्ति प्राप्त होगी।

—अपनी इस मानव कल्याण कारिणी संस्कृति और मातृभूमि के लिए ही हमारा सर्वस्व समर्पित हो। 'जन-ज्ञान' की गत·····वर्षों से यही साध रही है।

—सृष्टि में कुछ भी तो निरर्थक नहीं, प्रत्येक वस्तु और प्राणी की अपनी सत्ता है, जिसे हम उसके व्यक्तित्व की संज्ञा देते हैं।

—व्यक्तित्व का अपना वैशिष्ट्य रहता है, और वही स्वत्व उसका प्राण है।

—व्यक्तित्व अर्थात् इस वैशिष्ट्य का ओझल हो जाना ही है निरर्थकता, निरुद्देश्यता और निष्प्रयोजकता, यही है विनाश।

—जिसने व्यक्तित्व की रक्षा की वही अमर हो गया।

—जिसने व्यक्तित्व त्यागा वही चिरनिद्रा में सो गया।

—ऐश्वर्य और चमक-दमक तथा बड़े-बड़े ढांचे निरुद्देश्यता के भटकाव पर विनाश का आहार बनने से नहीं रोक सके।

—बड़ी-बड़ी व्यवस्थाएं और साम्राज्य भी निसत्व होने पर जड़ हुए बिना नहीं रह पाए।

—ससत्व रहना ही तो है जीवित रहने की प्रतिश्रुति।

—सत्यवान ही साहसी है, वही पुण्यात्मा है और जीवित रहने का अधिकारी है।

—अनेक संस्थाओं, व्यवस्थाओं एवम् पत्र-पत्रिकाओं के क्षणिक चमक दमक कर अदृश्य हो जाने का कारण भी यही है कि उन्होंने अपने सत्व को गंवा दिया।

—'जन-ज्ञान' ने अपने जन्म से ही स्वर-संस्कृति और स्वदेश की सेवा का सद् संकल्प ग्रहण किया और उसी पर वह संवरा और पुष्ट हुआ तथा सत्व को प्रकटाता रहा।

—आपदाओं, आलोचनाओं और अनेक तथाकथित अपनों ने ही उसे मिटाने के सपने संजोए किन्तु त्याग, तपस्या और कठोर साधना ने ही उसके 'सत्व' को संरक्षण दिया।

—असंख्य पाठकों और वैदिक विचारधारा के प्रति अनुरक्त जनों के शुभाशीर्वाद ही उसकी पूंजी हैं। 'जन-ज्ञान' उन सभी का चिरऋणी है और उन्हीं की शुभ कामनाओं से अब वह 'साप्ताहिक' के रूप में भी समक्ष आ रहा है।

—'जन-ज्ञान' महर्षि दयानन्द द्वारा पुनः उद्घोषित 'कृणवन्तो विश्वमार्यम्' के सत् स्वप्न को स्मरण करने के लिए असंख्य हृदयों में—जन-जन में स्वसंस्कृति के आराधन का सम्बल बनकर अग-जग में सत्य ज्ञान का प्रकाश पुनः बिखेरने में सफल हो और भारत भूमि पुनः विश्व वंद्य बनकर अशांत जगत् का शांति का दान कराने में समर्थ हो, उसी शुभ दिन की कल्पना को संजोए 'जन ज्ञान' का यह प्रयास समर्पित है।

—ज्योत्स्ना एम० ए०

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

साहित्य-समीक्षा

पतन के कगार पर: लेखक दीनानाथ सिद्धान्तालंकार और द्वारकाप्रसाद सेवक; प्रकाशक द्वारकाप्रसाद सेवक २०३ बी. गांवठन, विले पार्ले (पश्चिम), बम्बई-56; मूल्य दो रुपये, पृष्ठ संख्या १५० ।

प्रस्तुत पुस्तक आर्यसमाज स्थापना शताब्दी के अवसर पर प्रकाशित की गई है । जैसा इसके मुख पृष्ठ पर लिखा भी है, पुस्तक में यह प्रतिपादित किया गया है कि जन्मगत जाति-पांति हिन्दूसमाज का कोढ़ और आर्यसमाज का कैंसर है । दोनों लेखक आर्यसमाजी हैं, किन्तु उन्होंने स्पष्ट वादिता से काम लिया है और न केवल जन्म गत जाति-पांति के विरुद्ध खुलकर लिखा है अपने दिल की कोई बात छिपाई नहीं । मतलब यह कि दोनों लेखक जाति-पांति के समूलोन्मूलन के पक्ष पर हैं । श्री जयप्रकाश नारायण ने एक बार कहा था कि "अब तक स्वाधीन भारत में जितने भी चुनाव हुए हैं, उनमें कोई उम्मीदवार कहने को चाहे किसी भी दल के टिकट पर खड़ा हुआ हो, पर वस्तुतः सभी उम्मीदवारों का एक ही टिकट रहा है और वह जाति-पांति" । इसी से अनुमान लगाया जा सकता है कि हमारे देश में जाति-पांति की जड़ें कितनी गहरी हैं । हमारे देश के अधिकतर लोग अपने नामों के साथ जाति सूचक शब्द लगाते हैं, जैसे भल्ला, पुरी, कपूर, चड्ढा आदि । लेखक द्वय ने ठीक ही लिखा है कि सरकार को अपने नामों के साथ जाति-सूचक शब्द लगाने वालों के विरुद्ध कानूनी कार्रवाई करनी चाहिए । पुस्तक में इस बात पर जोर दिया गया है कि शादी-विवाह जात-पांत तोड़कर किये जायें और जिन विधर्मियों को वैदिक धर्म में दीक्षित किया गया है, उन्हें अपने में जज्ब करने का प्रयत्न किया जाये, ताकि वे पुनः विधर्मी हो जाने को विवश न हों ।

ऐसे विषयों पर लिखी जाने वाली पुस्तकें प्रायः शुष्क और नीरस होती हैं, लेकिन प्रस्तुत पुस्तक सरस, सजीव और ओजमयी भाषा में लिखी गई है । पुस्तक के दो लेखक हैं, एक नहीं, इसलिए थोड़ा बहुत घपला होना स्वाभाविक था । इसके निराकरण के लिए पं० दीनानाथ सिद्धान्तालंकार के विचार उन्हीं के नाम से और श्री द्वारकाप्रसाद सेवक के विचार श्र० नाम से दिये गये हैं ।

कुल मिलाकर पुस्तक उपयोगी है और हिन्दुओं के अस्तित्व की रक्षा के लिये चिन्तित समाज के लिए ग्राह्य है ।

सत्यपाल शास्त्री

नई दिल्ली-११०००५

हार्दिक प्रसन्नता

प्रिय श्री भारतेन्द्रनाथ जी,

मुझे यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता हुई कि दयानन्द संस्थान अपने पत्र 'जन ज्ञान' का साप्ताहिक संस्करण भी प्रकाशित कर रहा है । 'आर्यसमाज स्थापना शताब्दी' समारोह के प्रसंग में यदि आप अपने इस पत्र के माध्यम से देश की जनता में महर्षि दयानन्द के सिद्धान्तों के प्रचार की दिशा में कोई क्रान्तिकारी कार्य कर सकें तो बहुत बड़ा उपकार होगा । 'दयानन्द संस्थान' की अन्य प्रवृत्तियों की भाँति इसके द्वारा आर्यसमाज के संगठन पक्ष को भी बड़ा बल मिलेगा । आशा है आप समाज में प्रचलित दलबन्दी, जड़ता और रूढ़ीवादिता को रचनात्मक दृष्टि से दूर करने में सफल हो सकेंगे । मैं आपके इस सत्प्रयास के प्रति पूर्ण आशान्वित हूं ।

—भवदीय

क्षेमचन्द्र 'सुमन'

बढ़ो अकेले ही आगे

सोहनलाल द्विवेदी

मत सोओ कोई साथ नहीं,
कुछ अस्त्र-शस्त्र है हाथ नहीं ।
उत्साह उमंगों में पागे,
तुम बढ़ो अकेले ही आगे ।।

सब जा सकते भी संग नहीं,
सब लड़ सकते भी जंग नहीं ।
जोड़ो अपने बल के धागे,
तुम बढ़ो अकेले ही आगे ।।

खेलो खुल एक लंगोटी पर,
तुम चढ़ो अकेले चोटी पर ।
जीवन में नवजीवन जागे,
तुम बढ़ो अकेले ही आगे ।।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—कृष्णकान्त

युगप्रवर्तक स्वामी दयानन्द सरस्वती

आज हम उस महान् ऋषि, उस महान् युग-प्रवर्तक का बोध-दिवस मना रहे हैं, जिसका हिन्दू-धर्म के अंधकारमय आकाश में सूर्य की भांति उदय हुआ, जिसके ज्ञान के प्रकाश से अंधविश्वासों का अंधेरा दूर हो गया, जिसका उज्ज्वल प्रकाश भारत में ही नहीं, अपितु देश-देशांतरों में भी फैल गया। आज एक-आध धर्मांध मजहबों को छोड़कर कोई भी ऐसा धर्म नहीं, ऐसा मजहब नहीं जो स्वामी दयानन्द जी की विचारधारा से प्रभावित न हुआ हो। जब तक मानव जाति रहेगी, भारतीय इसिहास में स्वामी जी का नाम स्वर्णाक्षरों में लिखा रहेगा। वह महान् युगद्रष्टा जाते-जाते असंख्य दीप-शिखाएं प्रज्वलित कर गया, जिससे आने वाली पीढ़ियां मार्ग-दर्शन पाती रहेगी।

नेता दो प्रकार के होते हैं। एक होते हैं परिस्थितियों का निर्माण करने वाले, उन्हें इच्छित मोड़ देने वाले और दूसरे होते हैं परिस्थितियों के अनुसार चलने वाले, उनका दास बनकर चलने वाले। पहला कार्य दूसरे से सहस्र गुणा कठिन होता है। आधुनिक युग के नेताओं में स्वामी विवेकानन्द और किसी हद तक महात्मा गांधी को प्रथम श्रेणी के नेताओं में गिना जा सकता है। पं० जवाहरलाल नेहरू आदि नेता द्वितीय श्रेणी के नेताओं की गिनती में आते हैं। इन प्रथम श्रेणी के नेताओं को ही युगनिर्माता कहा जाता है, जिससे युग प्रभावित होता है।

स्वामी जी के कार्यों का यथार्थ मूल्यांकन करने के लिये आवश्यक है उस समय की परिस्थितियों का विश्लेषण करे, जिन परिस्थितियों में उस महान् पुरुष का प्रादुर्भाव हुआ। उन्नीसवीं सदी का उत्तरार्ध था। भारत अत्यन्त दयनीय दशा से गुजर रहा था। करीब आठ सौ साल की गुलामी के लम्बे अर्से में उसके असंख्य देशवासियों को मुसलमान बना दिया गया था। रही सही कसर अंग्रेजों ने निकाल दी। जो काम मुसलमान शासक आठ सौ साल में नहीं कर पाये वह कार्य उन्होंने सौ वर्ष में ही कर लिया था। अब वे इस चिंता में थे कि हिन्दूधर्म का समूल नाश कैसे किया जाए? उन्होंने भारत का इतिहास अपनी इच्छानुसार लिखवाया। रामायण, महाभारत को काल्पनिक कथाएं मानकर उन्हें इतिहास में स्थान नहीं दिया। कई अंग्रेज लेखकों ने पुस्तकें लिखकर रामायण और महाभारत की असत्यता सिद्ध की थी। जिनकी भाषा में "पतिव्रता" नाम का शब्द नहीं, जिनके इतिहास में कोई राम जैसा आज्ञाकारी बेटा नहीं हुआ, वे विदेशी इस बात का निर्णय करने लगे कि रामायण और महाभारत झूठी है या सच्ची।

किसी जाति का इतिहास उस जाति का प्राण होता है। उसी पर उस जाति की नीवें खड़ी होती हैं। उन नीवों के ढह जाने से वह जाति निष्प्राण हो जाती है।

अंग्रेजी शिक्षा का प्रसार शुरू हुआ। कुछ भारतीयों को अंग्रेजी की उच्च शिक्षा देकर उन्हें ऊंचा सम्मान दिया गया, जिनमें राजा राममोहन राय, केशवचन्द्र सेन आदि अग्रणी थे। ऐसे व्यक्तियों द्वारा कई संस्थाएं खोली गई, जिनमें ब्रह्मसमाज, देवसमाज और प्रार्थनासमाज प्रमुख थीं। ये संस्थाएं ईसाइयत का भारतीय संस्करण थीं। बड़ी तेजी से भारतीय, करीब-करीब ईसाई बनते जा रहे थे।

दूसरी ओर, स्वयं हिन्दू जाति में मूर्तिपूजा आदि अंधविश्वास और नाना प्रकार की कुरीतियां व्याप्त हो रही थीं। तत्कालीन अनपढ़ ब्राह्मणों द्वारा लोग गुमराह किये जा रहे थे। लोग वेद, शास्त्र, दर्शन, उपनिषद् आदि भूल चुके थे। वेद तो लुप्त ही हो चुके थे। पूजा, आरती, कीर्तन, व्रत, श्राद्ध आदि को ही धर्म की इतिश्री मानने लगे थे। हिन्दू जाति तमोगुण-ग्रस्त हो रही थी और उसमें महान् निष्क्रियता व्याप्त हो गई थी। लोग अपना उज्ज्वल भूतकाल भूल चुके थे। ऐसे समय में उस महान् आत्मा ने, उस महान् ज्योतिपुंज ने आज से एक सौ चवालीस वर्ष पहिले टंकारा में जन्म लिया। कुछ बालक जन्म लेते हैं तो उनका परिवार धन्य हो जाता है, कुछ पैदा होते हैं तो शहर धन्य हो जाता है। कुछ पैदा होते हैं तो प्रांत धन्य हो जाता है। कुछ के पैदा होने से देश धन्य हो जाता है और कुछ व्यक्ति ऐसे भी होते हैं जिनके जन्म लेने से

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ससार धन्य हो जाता है। ऐसे व्यक्ति दो-तीन हजार वर्ष में एक ही बार जन्म लेते हैं।

यों तो भारतभूमि को भगवान् का विशेष वरदान प्राप्त है। यहां समय-समय पर धर्म के रक्षक इस भूमि को पवित्र करते रहे हैं। आगे भी करते रहेंगे। लेकिन, अभी तक जो महान् आत्मा इस भूमि पर अवतीर्ण हुए, उनकी शिक्षा ज्ञानमूलक व भक्तिमूलक ही थी, कर्ममूलक नहीं। इसलिये वे सब देश का कल्याण एक सीमा तक ही कर सके। उनमें कुछ-एक को छोड़कर किसी ने भी भारत की अवनति के मूल कारण को समझने का प्रयत्न नहीं किया। स्वामी दयानन्द प्रथम व्यक्ति थे, जिन्होंने भारत की अवनति के सारे कारणों का गहरा अध्ययन किया। हिन्दू जाति की कुरीतियों को दूर करने के अतिरिक्त उन्होंने लोगों में राजनीतिक चेतना भी उत्पन्न की। स्वामी जी ने राजपूताने के कई राजा, महाराजाओं को राजनीतिक शिक्षा देने का भी प्रयास किया। वास्तव में भारत की स्वाधीनता का सार्वजनिक रूप से आह्वान करने वाले वे प्रथम व्यक्ति थे। तिलक, स्वामी विवेकानन्द, गोखले, गांधी आदि नेताओं को मूल प्रेरणा स्वामी जी से ही प्राप्त हुई।

एक बार अंग्रेज गवर्नर जनरल नार्थब्रुक ने स्वामी जी से पूछा—"स्वामी जी, हमलोग आपकी सभाओं की व्यवस्था के लिये पुलिस का प्रबंध करते हैं। कई बार आपके प्राणों की रक्षा भी की है। लेकिन फिर भी आप यहां से हमें भगाना चाहते हैं। यह उचित नहीं।" स्वामी जी ने उत्तर दिया—"अगर इंग्लैण्ड पर किसी देश का अधिकार हो जाए तो आपको कैसा लगेगा ? "गवर्नर ने रुष्ट होकर कहा—"मुझे अच्छा नहीं लगेगा।" स्वामी जी ने उत्तर दिया—"उसी प्रकार मुझे भी अपने देश पर विदेशियों का आधिपत्य अच्छा नहीं लगता। आप जितनी जल्दी यह देश छोड़कर जाएंगे, उतना ही इस देश का कल्याण होगा।" स्वामी जी के बाद दब्बू नेता बहुत आए, लेकिन ऐसी निर्भीकता से खरी-खरी सुनाने वाला दूसरा कोई नहीं आया।

तत्कालीन परिस्थितियां स्वामी जी के सर्वथा प्रतिकूल विपरीत और विषम थीं। कदम-कदम पर विपत्तियां थीं। सैकड़ों साल पुरानी कुरीतियां, ब्राह्मणों का संगठित विरोध शायद ही इतिहास में किसी अकेले व्यक्ति को इतनी विपदाओं का सामना करना पड़ा हो।

शुरू-शुरू में लोग उन्हें नास्तिक कहने में भी नहीं सकुचाते थे। लेकिन जब अन्ध-विश्वास के बादल स्वामी जी की विद्यारूपी वायु के प्रभाव से बिखरने लगे, फिर तो लोगों को सत्य का प्रकाश मिलने लगा। उनकी सभाओं में जहां कोई खड़ा भी होना धर्म-विरुद्ध समझता था, अब अपार भीड़ होने लगी। हिन्दुओं की मूर्तिपूजा के खण्डन के कारण तत्कालीन हिन्दू समाज उनके विरुद्ध था। असंख्य हिन्दुओं के धर्म-परिवर्तन के पश्चात् उनकी शुद्धि करके वापस हिन्दू धर्म में लाने के कारण और कुरान आदि की आलोचना करने के कारण मुसलमान भी रुष्ट थे। चाहे बाद में सर सैयद अहमद खां आदि दो-चार व्यक्तियों से स्वामी जी के मधुर सम्बन्ध भी बने, लेकिन वे अपवादस्वरूप ही थे। भारतीयों में राजनीतिक चेतना पैदा करने के कारण और बाईबिल का खण्डन करने के कारण अंग्रेज भी स्वामी जी के विरुद्ध थे। वे ऊपर-ऊपर से ही सद्भावना रखते थे। इस प्रकार एक ऐसी विषम परिस्थिति थी, जैसी विषम परिस्थिति और किसी भी राष्ट्रीय नेता के सामने नहीं आई। हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, अंग्रेज शासक सब उनके शत्रु थे। साथ देने वाला समर्थन करने वाला, विचार-विनिमय करने वाला कोई नहीं था। लेकिन उन्हें एक समर्थन प्राप्त था। वह था वह था उस जनन्नियंता का, उस सर्वशक्तिमान् का, उस जगद्बन्धु परमेश्वर का, जिसकी कृपा होने पर फिर किसी की कृपा की आवश्यकता नहीं रह जाती। संसार का कौन-सा ऐसा कार्य है जो उस प्रभु की अनुकम्पा से नहीं हो सकता। भगवान् का आशीर्वाद पाकर मनुष्य निडर हो जाता है। उसे कोई भयभीत नहीं कर सकता।

लोग नाना प्रकार की जिज्ञासाएं, प्रश्न और शंकाए लेकर उनके पास आते और उत्तर पाकर कृतकृत्य हो जाते, गद्गद हो जाते। कई बार लोगों ने स्वामी जी के चमत्कार भी देखे। एक बार की बात है, अमृतसर में स्वामी जी का व्याख्यान हो रहा था, असंख्य नर-नारी उपस्थित थे। अचानक आंधी का एक बवंडर उठा। एक बड़ा स्तूपाकार बवंडर घू-घू करके जनता की ओर बढ़ा। एक तूफान की सी स्थिति हो गई। श्रोताओं में भगदड़ मच गई। स्वामी जी ने टेबल पर जोर से थपथपा कर ऊंचे स्वर से कहा—"भाइयो, शांत होकर बैठे रहिये, ये बवंडर आगे नहीं आएगा।" लोग वापस लौट आए। उन्होने आश्चर्य से देखा कि वह बवंडर पण्डाल के किनारे को छूकर वापस चला गया। पण्डाल बड़ी देर तक तालियों से गूंजता रहा। श्रोताओं ने इसका रहस्य पूछा। उन्होंने उत्तर दिया—"मैं भगवान् का कार्य कर रहा हूं। भगवान् इस कार्य में विघ्न क्यों डालेंगे ?" इस प्रकार के चमत्कार लोगों ने पहिले भी अनुभव किये होंगे। लेकिन स्वामी जी किसी बात का श्रेय स्वयं नहीं लेना जानते थे।

भारतीयों की निर्धनता देखकर वे द्रवित हो जाते थे। एक बार स्वामी दयानन्द गंगा के किनारे बैठे थे। उन्होंने देखा, एक मां अपने मरे हुए बच्चे को लेकर आई और उसे गंगा की धारा में बहा दिया। लेकिन बहाने के पहिले उसका कफन उतार कर उसे निर्वस्त्र ही प्रवाह

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कर दिया। स्वामी जी का कोमल हृदय रो उठा—"किसी समय सोने की चिड़िया कहलाने वाले भारत की आज यह दशा ! एक मां कफन भी अपने मरे हुए बालक को नहीं दे सकती !! इतनी निर्धनता !!!'—स्वामी जी बहुत देर तक रोते रहे। उन्होंने निष्कर्ष निकाला, भारत का रुपया जब तक विदेशों को जाने से नहीं रोका जाएगा, तब तक देश की अवस्था नहीं सुधर सकती और यह तभी सम्भव है जब कि भारतीय युवक विदेशों में जाकर शिल्पकला की शिक्षा प्राप्त करके, विदेशों से मशीनें मगाकर यंत्रालय खोलें, शिल्पालय खोलें। स्वामी जी सब से पहिले व्यक्ति थे, जिन्होंने इस सम्बन्ध में प्रयत्न किये। उन्होंने 'मिस्टर बीस' नाम के एक जर्मन से लम्बा पत्र-व्यवहार भी किया। उन जर्मन महोदय ने स्वामी जी को लिखा—"आप बीस विद्यार्थी यहां भेजें। अपने स्वदेशी विद्यार्थियों के लिये तो हमने दूसरे व्यक्ति रखे हैं, लेकिन आपके विद्यार्थियों को मैं स्वयं ट्रेनिंग दूंगा।" लेकिन दुर्भाग्यवश समुद्रपार जाने के लिये कोई तैयार नहीं हुआ। स्वामी जी सबसे पहले भारतीय संन्यासी थे, जिन्होंने कहा कि भारतीयों को संस्कृत, हिन्दी के साथ विदेशी भाषाएं भी सीखनी चाहियें। यद्यपि इस बात का कहीं संकेत नहीं मिलता, लेकिन अवश्य ही स्वामी विवेकानन्द जी को स्वामी जी से प्रेरणा प्राप्त हुई होगी। अगर हम स्वामी विवेकानन्द को स्वामी जी का योरोपीय रूप कहें, तो अधिक उपयुक्त होगा। शायद आप लोग जानते होंगे कि स्वामी विवेकानन्द जब विदेश से लौट कर आये तो कई पुराणपंथियों ने उनका इसलिये कुछ समय के लिये बहिष्कार किया कि 'यह संन्यासी समुद्रपार जाने से भ्रष्ट हो गया है।" बाद में भी जब महामना मदनमोहन मालवीय गोलमेज कॉन्फ्रेंस में भाग लेकर वापस आये, तो बहुत से पुराणपंथियों ने उनका काले झण्डों से स्वागत किया, उन लोगों ने उनके भारत से गंगाजल और भारतीय मिट्टी तक भी इंग्लैण्ड ले जाने को पर्याप्त नहीं समझा। लोग पुरातन से, मिथ्या धारणाओं से इस प्रकार चिपके हुए थे, जैसे वही धर्म हो, वही वर्चस्व हो। हिन्दू धर्म में एक "विशेषता" है जो हजारों सालों से चली आ रही है। वह है ईर्ष्या। स्वयं भी कार्य न करना और दूसरा कोई कार्य करने की कोशिश करे तो उसके रास्ते में रोड़े अटकाना। स्वामी जी का सारा जीवन इसी का प्रमाण है।

मैं मिथ्या विश्वास की बात कह रहा था। जब पौराणिकों ने देखा, स्वामी जी तूफानी दौरे कर रहे हैं और सब ओर उनका अत्यधिक प्रचार हो रहा है, तो वे एक समूह बनाकर स्वामी जी के पास गये और जाकर कहा—"शास्त्रों में संन्यासी के लिये किसी यान की सवारी करना सर्वथा निषिद्ध है। आप शास्त्र-विरोधी आचरण करते हैं इसके लिये आपको प्रायश्चित्त करना चाहिये।" स्वामी जी ने उत्तर दिया—"लोक-कल्याण के लिये यान पर सवारी करना वर्जित नहीं है।" वास्तविक धर्म वह है जो कठिन से कठिन परिस्थिति में, विषम से विषम अवस्था में व्यक्ति या समाज का मार्ग दर्शन करता हो।

स्वामी जी के जीवन का महान् कार्य यह था कि उन्होंने ज्ञान और कर्म का सामंजस्य करने की, दोनों को मिलाने की कोशिश की और इसमें उन्हें आशातीत सफलता मिली। धर्म के तीन अंग होते हैं—उपासना, ज्ञान और कर्म। उस समय लोग केवल उपासना में ही लीन थे। वह उपासना भी केवल घण्टियां बजाने, धूप जलाने और मूर्तियों को भोग लगाने तक ही सीमित थी। इससे भला क्या ज्ञान-प्राप्ति हो सकती है। वह ज्ञान व्यर्थ है जो मनुष्य को कर्म में प्रवृत्त नहीं करता और वह कर्म व्यर्थ है जिससे व्यक्ति का हित नहीं होता, उसका कल्याण नहीं होता।

उपासना, अध्यात्मज्ञान और कर्म इनमें किसका कितना महत्त्व है यह बात वेदों से स्पष्ट है। वेद से स्पष्ट है कि व्यक्ति या समाज को १६% उपासना, स्तुति और भक्ति की ओर, ४% ज्ञान की ओर और ८०% कर्म की ओर ध्यान देना चाहिये। ज्ञान की आवश्यकता या माहात्म्य कम नहीं, ज्ञान सर्वश्रेष्ठ है। धर्म, जाति या व्यक्ति का प्राण है तो ज्ञान व्यक्ति की आंखें हैं और कर्म उसके हाथ-पांव। ज्ञान के बिना व्यक्ति अंधा है तो कर्म के बिना लूला और लंगड़ा। ये तो एक दूसरे के पूरक हैं, एक की दूसरे के बिना गति नहीं। तभी शास्त्रों में कहा है—"ज्ञानं भारः क्रियां बिना।" अर्थात् कर्म के बिना ज्ञान भारस्वरूप है और इसी प्रकार ज्ञान के बिना कर्म बंधन है। ज्ञान का महत्व सर्वोपरि है। लेकिन ज्ञान हमें कर्तव्य का ही तो बोध कराता है इसलिये ज्ञान की सार्थकता कर्म में ही है। वास्तव में आज तक संसार में जो कुछ अनर्थ हुआ है, वह ज्ञान और कर्म का मेल न होने से ही हुआ है। ज्ञानी कर्म में रुचि नहीं रखते और कर्म करने की इच्छा वाले के पास ज्ञान प्राप्त करने का धैर्य नहीं होता। ज्ञान के बिना कर्म पाप है और कर्म के बिना ज्ञान पाप का कारण बनता है। इसलिये स्वामी जी ने वेदों के कर्म-पक्ष को प्रधानता दी।

भारत में यह अकर्मण्यता बौद्धकाल से शुरू हुई। बुद्ध ने वेदों का विरोध किया, उनका खण्डन किया। वेदों द्वारा स्थापित वर्ण-व्यवस्था उन्होंने भंग कर दी। लोगों की धर्म में आस्था समाप्त हो गई। कितने आश्चर्य की बात है कि जब बुद्ध यहां "अहिंसा परमो धर्मः" की सार्वजनिक शिक्षा दे रहे थे, उस समय यूनान में सिकंदर के दादा भारत पर हमला करने की योजना बना रहे थे।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वर्ण-व्यवस्था चाहे जन्म पर आधारित थी, लेकिन फिर भी वह कर्म से सम्बन्धित थी। वर्ण-व्यवस्था के टूट जाने से ब्राह्मणों ने विद्याभ्यास छोड़ दिया, क्षत्रियों ने युद्ध करना छोड़ दिया। वैश्यों ने अपना व्यवसाय छोड़ दिया और शूद्रों ने कला-कौशल छोड़ दिया। लोगों में संन्यासी वृत्ति शुरू करने वाले बुद्ध ही थे। पहिले के ऋषियों में से कोई भी संन्यासी नहीं थे। लोगों में घोर अकर्मण्यता छा गई। बौद्ध बिहारों में भिक्षुणियों के कारण घोर अनाचार भी फैल गया। सिकंदर के हाथों भारत के पराजित होने का कारण युद्धकला का, अस्त्र-शस्त्रों का विकास रुक जाना ही था। वेदों पर से आस्था उठ जाने के कारण तत्कालीन किसी राजा ने अश्वमेध यज्ञ या राजसूय यज्ञ नहीं किया, जिससे कोई चक्रवर्ती राजा न बन सका। अगर वेदों का ह्रास न हुआ होता तो यह हालत नहीं होती।

बौद्धमत को उनके जन्म-स्थान से ही उखाड़ फेंकने का श्रेय शंकराचार्य को है। इसमें कुमारिल भट्ट का सहयोग भी कम नहीं था। कुमारिल भट्ट वह व्यक्ति था जो विलाप करते हुए कहा करता था—"किं करोमि कुत्र गच्छामि को वेदानुद्धरिष्यति।" आज किसके हृदय में इस प्रकार वेदना होती है।

जब तक संसार में वैदिक धर्म रहेगा, मानवता रहेगी, तब तक मर्यादा पुरुषोत्तम राम, योगेश्वर कृष्ण, जगद्गुरु शंकराचार्य और महर्षि स्वामी दयानन्द ये चार नाम सूर्य की भांति चमकते रहेंगे। इन महापुरुषों में से अगर एक भी नहीं आते, तो आज आर्य धर्म का चिह्न भी शेष नहीं रहता और वेदों का नाम लेने वाला भी कोई नहीं बचता।

स्वामी जी की विशेष उपलब्धियां ये हैं—उन्होंने वेदों की पुनः स्थापना की, मूर्ति पूजा का खण्डन किया, यज्ञों में लोगों की रुचि पैदा की। "शुद्धि" तो हिन्दू समाज में स्वामी जी की अपनी देन है।

स्वामी जी ने हिन्दू समाज के उद्धार के लिये जो कुछ किया, उससे हिन्दू समाज कभी उऋण नहीं हो सकता। उनके बारे में कुछ बताने के लिये यह छोटा-सा लेख अपर्याप्त है।

आइये, आज उस महान् क्रांतिकारी, युगद्रष्टा और युग प्रवर्तक के बोध-दिवस के उपलक्ष्य में हम प्रण करें कि जाति, सम्प्रदाय, वाद, पार्टी इन सबसे ऊपर उठकर हम देश-हित को ही सर्वोच्च महत्व देंगे, उसी के लिये कार्य करेंगे और उसी को अपना लक्ष्य बनाएंगे।

सत्यार्थ प्रकाशः बड़ा २००) सैंकड़ा

संस्थान के नए प्रकाशन

१. आर्याभिविनय

काव्यमय व्याख्या सजिल्द २.५०
अजिल्द १.५०।

२. उपदेश मंजरी

महर्षि के पूना व्याख्यानों का संग्रह
मूल्य १.५०

३. प्रभु के चरणों में

पं० हरिशरण सिद्धान्तालंकार
मूल्य १.५०

४. आदर्श परिवार

विवाह पर बांटने : योग्य पुस्तक
मूल्य ६० पैसे

५. धर्म-सार

स्व० पं० गंगाप्रसाद जी की अनमोल रचना साधारण जनता में प्रचार के लिए
मूल्य १ रु०

६. संस्कार विधि

राज संस्करण बड़ा साईज कपड़े की जिल्द
मूल्य ६ रु०

शीघ्र मंगाइए

दयानन्द संस्थान, नई दिल्ली-११०००५

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कहानी

—श्री भीष्म आर्य

विवाह परीक्षा

★

कामेश्वरी के पिता ने यह सोचकर कि इसका विवाह भला कैसे होगा, इस दिशा में कोई प्रयत्न करने का साहस ही नहीं किया। किन्तु उनके इस निर्णय का कारण नहीं था कि कामेश्वरी के सौन्दर्य में कोई कमी थी, या उसमें विद्या-बुद्धि और सद्गुणों का कोई अभाव था। कामेश्वरी की आंखों पर चढ़ा हुआ चश्मा उसके सौन्दर्य पर चार चांद लगा देता था।

कामेश्वरी का विवाह होने में बाधा क्या थी, यह किसी की समझ में नहीं आ रहा था। अभी साल भर पहले ही तो उसने प्रथम श्रेणी में बी० ए० की परीक्षा पास की थी। उसके पिता विश्वनाथ अवकाश प्राप्त तहसीलदार थे। कामेश्वरी ही उनकी एकमात्र सन्तान थी, और इसलिए उन्होंने लाड़-प्यार से उसका पालन-पोषण किया, और उसकी इच्छानुसार उसे शिक्षा-दीक्षा दी। कामेश्वरी के बी० ए० पास करने के बाद विश्वनाथ की इच्छा थी कि किसी योग्य वर से उसका विवाह कर अपनी सारी सम्पत्ति उन दोनों के नाम लिख दें और स्वयं काशीवास करने चले जायें।

किन्तु बाद में उन्हें यह भय होने लगा कि कहीं उनकी आशा-निराशा में परिवर्तित न हो जाये।

कामेश्वरी से विवाह करने की इच्छा बहुत से युवकों ने प्रकट की। जिस किसी ने भी उसे देखा उसका पाणि-ग्रहण की इच्छा प्रकट की, विश्वनाथ भी समझ रहे थे कि अब क्या है, केवल पक्की होना बाकी है। किन्तु पक्की कैसे हो? उसके लिए कामेश्वरी की सहमति भी तो आवश्यक थी। इस प्रकार अब तक विवाह न हो सकने का कारण कामेश्वरी ही थी।

समाज की पुरातन पद्धति के कारण वर कन्या को देखने आया करता है और यदि वर को कन्या पसन्द आ गई तो दूसरी ब्योरे की बातें तय होती हैं और उसके बाद विवाह हो जाता है। जिन परिवारों में अब भी रूढ़िवाद का बोल-बाला है, उनमें माता-पिता की सहमति से ही विवाह निश्चय हो जाता है।

किन्तु कामेश्वरी का मामला ही कुछ और था। उस दिन सवेरे लगभग दस बजे का समय रहा होगा। कामेश्वरी आराम कुर्सी पर थी और सामने की कुर्सी पर वह सज्जन विराजमान थे, जो कन्या देखने आए थे। पास ही दूसरी कुर्सी पर विश्वनाथ बैठे हुए थे। विश्वनाथ ने मौन भंग करते हुए कहा, "हां, तो अब शुरू करो न!"

तुरन्त ही वर महोदय ने अपनी जेब से एक कागज निकाला और प्रश्न करना आरम्भ कर दिया, और कामेश्वरी प्रश्नों का उत्तर देने लगी।

"एवरेस्ट शिखर की ऊंचाई क्या है?"

"२९००२ फीट।"

"आजकल फ्रांस का प्रधान मन्त्री कौन है?"

"मोशिये मेयेर।"

"पृथ्वी से सूर्य की दूरी कितनी है?"

"९२,९७८,४०० मील।"

"सन १८९४ में भारत का गवर्नर जनरल कौन था?"

"लॉर्ड कर्जन।"

"संसार का सबसे बड़ा रेलवे स्टेशन कौन-सा है और उसके कितने प्लेटफार्म हैं?"

"न्यूयार्क का ग्रांड सेन्ट्रल टर्मिनस सबसे बड़ा स्टेशन है और उसके ४७ प्लेटफॉर्म हैं।"

"वेनेजुएला नगर का क्षेत्रफल कितना है?"

"३५२,०५१ वर्ग मील।"

अपने सभी प्रश्नों का तुरन्त सही उत्तर पाकर वर महोदय चकित हो गए और "बस मैं हार मान गया" यह कहते हुए वे उठकर चले गए।

बात यह थी कि कामेश्वरी ने अपने विवाह के लिए नए ढंग की शर्त रखी थी। आपने प्राचीन कथाओं में सुना होगा कि कुछ राजकुमारियां विवाह-इच्छुक युवकों से कुछ प्रश्न पूछा करती थीं। महाकवि कालिदास की भी तो कुछ ऐसी ही कथा है। किन्तु, उन राजकुमारियों का यह नियम था कि जो विवाहाहेच्छु उनके प्रश्नों का सही उत्तर दे देता था उनसे वे विवाह कर लेती थीं। किन्तु, कामेश्वरी की शर्त इन पौराणिक राजकुमारियों से भी भिन्न थी। उसका निश्चय था कि वह उसी युवक से विवाह करेगी जो उसकी अपेक्षा अधिक बुद्धिमान हो। यही कारण था कि विवाह की इच्छा से आने वाले सभी युवक कामेश्वरी से साधारण ज्ञान सम्बन्धी प्रश्न पूछा करते थे। शर्त यह थी कि यदि कामेश्वरी किसी भी प्रश्न का उत्तर न दे सकेंगी तो वह प्रश्नकर्ता युवक से शादी कर लेंगी। किन्तु आज तक कोई भी इस शर्त को पूरा नहीं कर सका।

विश्वनाथ को यह सब नाटक तनिक भी पसन्द नहीं था। यदि कामेश्वरी की उम्र १८ वर्ष से कम होती तो वे उसके दो चांटें लगाते और किसी-न-किसी के गले मढ़ देते। किन्तु अवकाश प्राप्त तहसीलदार होने के कारण वे जानते थे कि १८ वर्ष से अधिक उम्र की लड़की

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पर हाथ उठाने का उन्हें कोई अधिकार नहीं है। इसलिए अपने वर का चुनाव स्वयं कर लेने की स्वतन्त्रता उन्होंने कामेश्वरी को दे रखी थी और इस कार्य में वे जो भी सहायता प्रदान कर सकते थे, उसके लिए सदैव तत्पर रहते थे।

× × ×

सुन्दरम् पांच बार बी० ए० की परीक्षा में फेल होने के बाद इन दिनों अपने मामा विश्वनाथ के घर लौट आया था। ०वह इसी विचार में था कि अब किसी धन्धे में लगकर चार पैसे कमाने का प्रयत्न किया जाए; किन्तु इसी समय श्री विश्वनाथ ने पता नहीं उसे क्या पाठ पढ़ाया था कि उसने न जाने कहां से बहुत-सी पुस्तकें एकत्र करली हैं और दिन-रात पढ़ने में जुटा रहता है।

इतने तन्मय होकर अध्ययन में उसे व्यस्त देखकर कामेश्वरी ने कई दिन बाद उससे पूछा, "क्यों जीजाजी, क्या मामला है? आजकल बहुत जोर-शोर से पढ़ाई हो रही है! क्या फिर बी० ए० की परीक्षा में बैठने का विचार है।

० दक्षिण भारत में मामा की पुत्री से विवाह की प्रथा प्रचलित है।

"राम कहो! अब कौन बी० ए० की परीक्षा देगा! किसी दूसरी ही परीक्षा की तैयारी है।"

"तो क्या एम० ए० की परीक्षा दीजियेगा?" कामेश्वरी ने मजाक करते हुए पूछा।

"अरे नहीं! एम० ए० और एल-एल० बी० किसी परीक्षा की तैयारी नहीं है। तैयारी तो उस परीक्षा की है, जिसमें उत्तीर्ण होता तुम्हारे विवाह के लिए आवश्यक है।"

कामेश्वरी का चेहरा लज्जा के कारण लाल हो गया, और "हटिये जीजाजी!" कहती हुई वह भाग गई।

सुन्दरम् इस विवाह परीक्षा में भी दस बार असफल रहा! उसने कामेश्वरी से दुनियां-भर के प्रश्न पूछ डाले; किंतु कामेश्वरी ने सभी प्रश्नों का उत्तर दे दिया। बात यह नहीं थी कि वह सुन्दरम् से विवाह करना नहीं चाहती थी; किंतु सुन्दरम् ही उससे विवाह करने के लिये आवश्यक शर्त पूरी न कर सका था।

एक दिन सुन्दरम विश्वनाथ से बड़ी चिन्तित मुद्रा में बातें कर रहा था। विश्वनाथ ने उसके प्रति सहानुभूति प्रकट करते हुए कहा, "क्या बताऊं सुन्दरम् कुछ समझ में नहीं आता कि क्या उपाय करूं?"

"हाँ, मामाजी! मैं ही क्या करूं? आपने जितनी पुस्तकें बताईं, उन सबको मैंने पढ़ डाला और उनमें से मैंने प्रश्न भी पूछे। अपनी बी० ए० की पुस्तकें भी मैंने इसलिये दुहरा डालीं; किन्तु कामेश्वरी के आगे कोई बस नहीं चलता।"

"हां बेटा! इसमें तुम्हारा क्या दोष? इस समय तुमने जितना पढ़ा उस पढ़ाई से तो तुम आई० ए० एस० की भी परीक्षा पास कर सकते थे, लेकिन तुम एक पुस्तक पढ़ते हो तो उतनी ही देर में कामेश्वरी दस पुस्तकें पढ़ डालती हैं। इसका इलाज ही क्या हो सकता है?"

दूसरे दिन इस निश्चय के साथ कि कामेश्वरी को चाहे जैसे हो पराजित करना हैं, सुन्दरम् उसके कमरे में जा पहुंचा। अपनी दोनों मुट्ठियों में रेत भर कर उसने कामेश्वरी से पूछा, "मेरी मुट्ठी में रेत के कितने कण हैं?"

"एक लाख सैंतीस हजार चार सौ उन्चास।"

"गलत! गिन कर दिखाओ।"

"आप गिन कर सिद्ध कीजिये कि मेरा उत्तर गलत है।"

सुन्दरम् के पास इसका कोई उत्तर नहीं था। वह चुपचाप उठकर चला गया।

× × ×

एक दिन सुन्दरम् और विश्वनाथ ने आपस में पता नहीं क्या गुप्त मंत्रणा की।

दूसरे दिन सुन्दरम् आठ ही बजे कामेश्वरी के कमरे में जा धमके। उसके चेहरे पर भावी विजय की आशा से प्रसन्नता टपक रही थी।

"आज तो आप बड़े प्रसन्न दिखाई दे रहे हैं, जीजाजी!" कामेश्वरी ने उसका स्वागत करते हुए कहा।

"मैं पुनः परीक्षा देने आया हूं।" सुन्दरम् ने मुस्कराते हुए उत्तर दिया।

"तो पूछिये न! मैं आपके प्रत्येक प्रश्न का उत्तर देने को सदैव तैयार हूं।" कामेश्वरी ने उत्तर दिया। उसे अब भी दृढ़ विश्वास था कि उसे पराजित करने की योग्यता किसी में नहीं हैं।

"अच्छा, तो तुरन्त बताओ कि ऐसा कौनसा प्रश्न है जिसका उत्तर तुम नहीं दे सकतीं? जल्दी बताओ।"

कामेश्वरी चकित रह गई। किन्तु उसका हृदय पराजय की प्रसन्नता से बांसों उछल रहा था। "जीजाजी आप जीत गये! यदि मैं उत्तर न दूं तो आप विजयी हैं और यदि बता दूं तो भी वही प्रश्न पूछ कर आप विजय प्राप्त कर लेंगे।"

"हे भगवान! अब मेरी चिन्ता मिटी। अब तुम लोग चाहे विवाह करो या यों ही खेल खेलते रहो। भविष्य का निर्णय करना अब तुम लोगों का काम है, यह कहते हुए विश्वनाथ वहाँ से उठकर बाहर चले गए।

× × ×

उसी वर्ष सुन्दरम् ने बी० ए० की परीक्षा पास कर ली और एम० ए० की तैयारी में लग गया।

(शेष पृष्ठ ३६ पर)

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

रघुवीरसिंह शास्त्री—

आर्य समाज का शिक्षा क्षेत्र में योगदान

●●●

स्वामी दयानन्द जब कार्य क्षेत्र में उतरे और अपने विचारों तथा उद्देश्यों के प्रचार प्रसार के लिये 'आर्यसमाज' नामक संगठन की स्थापना की, वह 1857 की क्रान्ति की विफलता के बाद के सन्नाटे का युग था। उक्त क्रान्ति को कुचलने के लिये चलाये गये दमन चक्र की पृष्ठ भूमि में ब्रिटिश शासन का आतंक पराकाष्ठा को छू रहा था। राष्ट्र का स्वाभिमान हतप्रभ हो चुका था, उसके क्षितिज पर अन्धकार एवं अवसाद का कुहरा छाया हुआ था। समाज निराशा, अज्ञान और अन्धविश्वास के गहरे गर्त में मूर्छित सा पड़ा था। कुछ इने-गिने लोग जो शिक्षित थे, और समाज में अग्रणी बने हुए थे, वे भी शान्ति एवं व्यवस्था की दुहाई देते हुए शासकों की स्वागत स्तुति में लगे हुए थे। विदेशी शासकों ने अपने विशुद्ध साम्राज्यवादी एवं शोषणपरक इरादों से जो शिक्षा पद्धति चलाई थी, वह न केवल देश के गौरव एवं संस्कृति के मूलों पर ही प्रहार कर रही थी अपितु वह इतनी निकम्मी थी कि जन जीवन के साथ उसका कोई सम्बन्ध ही नहीं स्थापित हो सकता था। कुछ थोड़े से सुविधा सम्पन्न वर्ग के लोग उससे लाभान्वित हो सकते थे। इनके लिये भी यह मानसिक एवं वैचारिक दासता का प्रतीक मात्र थी। ऐसी अवस्था में आर्यसमाज देश में शिक्षा प्रसार के क्षेत्र में इस संकल्प के साथ आगे बढ़ा कि ऐसी शिक्षा दी जाय जो राष्ट्र-संतति में स्वाभिमान और अपनी संस्कृति के प्रति गौरव की भावना पैदा कर सके। समाज के दुर्बल लोगों के लिये वह सुलभ हो। समाज में व्याप्त अज्ञान, अन्ध विश्वास, शोषण, ऊंच-नीच का भाव समाप्त करके सार्वजनिक न्याय की भूमिका बन सके।

डी० ए० वी० कालेज

सबसे पहले सन् 1886 में लाहौर में डी० ए० वी० (दयानन्द ऐंग्लो वैदिक) कालिज की स्थापना की गई। संस्थापकों में महात्मा हंसराज, पं० गुरुदत्त विद्यार्थी, लाला लाजपत राय तथा भाई परमानन्द जी आदि प्रतिष्ठित राष्ट्रीय नेता थे। ये सब कालेज में अध्यापन कार्य भी करते थे। तदुपरान्त सारे पंजाब में तथा उत्तर प्रदेश आदि में डी० ए० वी० स्कूलों और कालिजों का जाल सा फैल गया। देश के अन्य भागों में भी प्रायः सभी प्रमुख नगरों में आर्य समाजियों ने ऐसी संस्थाएं खोलीं। इनमें आधुनिक विषयों के साथ-साथ संस्कृत तथा हिन्दी को अनिवार्य विषय बनाया गया। इन संस्थाओं ने भारी संख्या में ऐसे युवक प्रदान किये जिन्होंने कानून, न्याय, शिक्षा, राजनीति, प्रशासन तथा समाज सेवा आदि सभी क्षेत्रों में विशिष्ट ख्याति प्राप्त की। आज भी शिक्षा जगत् में इन संस्थाओं का महत्वपूर्ण स्थान है। साथ ही स्वामी श्रद्धानन्द ने हरिद्वार में गंगा के पूर्वी तट पर हिमाचल की उपत्यका की वन्यस्थली में गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना करके एक विशेष क्रान्तिकारी पग उठाया। यद्यपि पुरानी परम्परा के अनुसार उस समय पण्डित मण्डली द्वारा भी एक शिक्षा प्रणाली चलती थी, परन्तु उसमें भी अनेक त्रुटियां थीं। वह समय की आवश्यकता को पूर्ण न करती थी, क्योंकि उसमें आधुनिक ज्ञान-विज्ञान का समावेश न था। जन्म के आधार पर एवं जाति विशेष के बालकों को छोड़कर अन्य सबके लिये उसके द्वार बन्द थे। स्त्रियों को पढ़ाना तो धर्म के विरुद्ध करार दे दिया गया था। चरित्र निर्माण की ओर भी कोई ध्यान नहीं दिया जाता था। इस प्रकार विदेशी शासकों की नई तथा पण्डित मण्डली की पुरानी इन दोनों ही शिक्षा पद्धतियों के मुकाबले में आर्यसमाज ने प्राचीन गुरुकुल प्रणाली के पुनर्जीवन का उपक्रम किया। एक ओर जैसे-जैसे गुरुकुल जनता के आकर्षण स्नेह का केन्द्र बनकर विकसित हो रहा था, दूसरी ओर वैसे ही सरकारी क्षेत्रों में शंका और सनसनी का कारण बन रहा था।

गुरुकुलीय शिक्षा प्रणाली

गुरुकुलीय शिक्षा का प्रमुख आदर्श आश्रम-व्यवस्था, गुरु-शिष्य का सान्निध्य, चरित्र निर्माण, सादगी तथा समानता हैं। शिक्षा ग्रहण करने और वेद वेदांगादि के पढ़ने का अधिकार प्रत्येक नर-नारी को है। वर्ण, जन्म, लिंग तथा जाति के आधार पर किसी को उससे वंचित नहीं किया जा सकता। छुआछूत का अभिशाप कभी गुरुकुल को छू नहीं गया। जाति-पांति की संकीर्णता से वह सदा मुक्त रहा। अछूत कहे जाने वाले वर्ग के ऐसे

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

हजारों युवक हैं जो गुरुकुल में इस प्रकार पूर्ण सम्मान तथा सुविधा के साथ शिक्षा पाते रहे हैं कभी किसी को उनकी तथाकथित जाति अथवा कुल का आभास तक नहीं हुआ। पीछे भी समाज में उन्हें पूरा आदर मिलता रहा। शिक्षा समाप्ति के पश्चात् समाज में भी उन्हें पूरा सम्मान मिला। गुरुकुल में गरीब-अमीर तथा ऊंच-नीच के भेदभाव को भुलाकर समाज की सारी सन्तति को निःशुल्क शिक्षा के साथ-साथ भोजन-वस्त्र, रहन-सहन आदि की समान सुविधाएं मिलती हैं। शिक्षा में समष्टि-वादी ढांचे के दर्शन आज भी गुरुकुलों में किये जा सकते हैं।

गुरुकुल की विशेषता

गुरुकुल की एक विशेषता यह भी उल्लेखनीय है कि वह आरम्भ से स्वाधीनता आन्दोलन तथा राष्ट्रीय जन जागरण का केन्द्र रहा। इसी भावना के कारण किसी गुरुकुल ने विदेशी शासन के समय सरकार से कभी कोई वित्तीय सहायता नहीं ली और केवल जनता की शुभ-कामना के आधार पर ही जीवित रहे। स्वामी श्रद्धानन्द जी के सामने उस समय ब्रिटिश ताज के उच्चतम प्रति-निधि तत्कालीन गवर्नर जनरल लार्ड चेम्स फोर्ड ने स्वयं गुरुकुल के लिये वित्तीय सहायता देने की उत्सुकता प्रकट की, परन्तु स्वाभिमानी संन्यासी ने उसे अस्वीकार कर दिया। स्वभावतः अनेक भीषण आर्थिक कठिनाइयों को झेलते हुए भी गुरुकुल के संचालकों ने विदेशी सरकार से सहायता न लेने के व्रत को पूरी तरह निभाया। वे ऐसी चर्चा तक को अपनी पवित्रता पर आंच आना मानकर काम करते थे। गुरुकुल न केवल जनता के लिये ही तीर्थ स्थान बना हुआ था, अपितु महात्मा गांधी, पण्डित मदन मोहन मालवीय, वीर सावरकर, रवीन्द्रनाथ ठाकुर, सी० एफ० एण्डयूज, पं० मोतीलाल नेहरू आदि सभी राष्ट्रीय नेता समय-समय पर गुरुकुल आते रहे। महात्माजी तो कई बार आये और कई-कई दिन ठहरते रहे।

गुरुकुल कांगड़ी के पश्चात् सैकड़ों गुरुकुल देश के कोने-कोने में खुले। इनमें से कई बहुत ख्याति प्राप्त रहे और जिनसे निकले हजारों युवकों, विद्वानों ने विभिन्न क्षेत्रों में देश की महत्वपूर्ण सेवा की। हिन्दी, संस्कृत तथा वैदिक साहित्य के प्रचार का तो बहुत बड़ा श्रेय गुरुकुलों को ही दिया जा सकता है।

गुरुकुल ने आरम्भ से ही प्राचीन तथा आधुनिक सभी विषयों का पाठ्य क्रम में समावेश करते हुए उन सब में शिक्षा का माध्यम संस्कृत और हिन्दी को रखा। विज्ञान एवं अर्थशास्त्र आदि के शिक्षण के लिये सबसे पहले बीसवीं शताब्दी के आरम्भ में पारिभाषिक शब्द गुरुकुल में ही रचे गये। हिन्दी को शिक्षा का माध्यम बनाने का एकमात्र श्रेय गुरुकुल को ही दिया जा सकता है। हिन्दी जगत् को गुरुकुल ने अनेक विख्यात लेखक तथा पत्रकार दिये। दिल्ली से प्रकाशित होने वाले हिन्दी के सभी दैनिक पत्र प्रायः गुरुकुल के स्नातकों के सम्पादन में ही शुरू हुए।

स्त्री शिक्षा का कार्य

स्त्री शिक्षा का कार्य भी देश में आर्यसमाज ने ही आरम्भ किया। स्वामी जी ने सत्यार्थ प्रकाश में लिखा कि "यह राज नियम या जाति नियम होना चाहिये कि पांचवें अथवा आठवें वर्ष से कोई अपने लड़के और लड़-कियों को घर में न रख सके। पाठशाला में अवश्य भेज देवे। जो न भेजे वह दण्डनीय हो।" बालिकाओं की शिक्षा आर्यसमाज के कार्यक्रम का सदा विशेष अंग रही है। इसीलिये जहां-जहां आर्यसमाज स्थापित होते या आर्यसमाज मन्दिर बनते, वहीं साथ ही कन्या पाठशाला भी चालू हो जाती थी। यही कारण है कि आज भी सर्वत्र आर्यसमाज मन्दिरों में कन्या शिक्षण संस्थाएं चल रही हैं। जिनमें से बहुत सी विश्वविद्यालय की उच्चतम श्रेणियों तक शिक्षा दे रही हैं। उस समय लड़कियों का पढ़ाना अन्ध विश्वास वश बड़ा अनिष्ट माना जाता था। इसी कारण प्रायः आर्यसमाजियों को सामाजिक प्रकोप तथा बहिष्कार का सामना भी करना पड़ता था। लड़-कियों के गुरुकुल भी खोले गये। सबसे पहले ला० देवराज जी ने जालन्धर में आर्य कन्या महाविद्यालय की स्थापना की। इसके पश्चात् देहरादून, बड़ौदा, पोरबन्दर, खान-पुर (हरियाणा) नरेला (दिल्ली) तथा कनखल आदि में गुरुकुल खोले गये जो आज भी कन्याओं के शिक्षण क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य कर रहे हैं।

स्वाधीनता के पश्चात् यद्यपि देश में सभी स्तरों की शिक्षा के प्रचार प्रसार में प्रगति हुई है। पहले १० प्रति-शत से भी कम साक्षरों की संख्या अब ३० प्रतिशत तक पहुंच गई है, देश में १८ विश्वविद्यालय थे, अब लगभग सौ हैं। ७०० कालिजों की संख्या बढ़ कर चार हजार के लगभग हो गई है। आज सभी स्तरों पर लगभग ८ करोड़ छात्र शिक्षा पा रहे हैं। यूरोप के नक्शे पर तो किसी बड़े से बड़े देश की भी इतनी जनसंख्या नहीं है। अमे-रिका और रूस को छोड़कर विश्वविद्यालयों में जाने वाले छात्रों की संख्या हमारे देश में सबसे अधिक है। परन्तु कैसी बिडम्बना है कि देश के संचालकों के लिये बढ़ती हुई यह छात्र संख्या भी उतना ही सिर दर्द बन रही है जितना कि बढ़ती हुई साधारण जनसंख्या। शिक्षा विस्तार के साथ-साथ इस क्षेत्र की समस्यायें भी विकट-तर होती जा रही हैं। स्वभाषा, उपयोगी शिक्षा तथा सर्वत्र सुलभ समानतावादी जीवन पद्धति की अपेक्षा इस देश की शिक्षा प्रणाली व्ययसाध्य जीवन घेरों में जकड़ी हुई है। समाज के कालुष्य एवं कुसंस्कारों के निवारण में

(शेष पृष्ठ २४ पर)

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—दीदी

असंतुलन में विवेक का सहारा लेना उत्तम

●●●

सदा तो कोई भी प्रसन्न रहता है न शांत। जीवन के दायरे बड़े व्यापक हैं। कई बार हम यदा-कदा विवेक-हीनता भी कर बैठते हैं। ऐसी स्थिति में हम ऐसा कुछ भी कर जाते हैं कि जिसके परिणाम का हम विचार ही नहीं कर पाते। बात कुछ ऐसी हो जाती है कि फिर चाहने पर भी उसका प्रभाव नहीं मिटा पाते।

जो जितना निकट होता है उससे मनमुटाव की सम्भावनाएं भी उतनी ही अधिक रहती हैं। इसका कारण एक नहीं अनेक हैं। किसी विषय पर विचारों में मतभेद हो सकता है तो कभी किसी संबंधी की प्रशंसा या आलोचना भी पति पत्नी में मतभेद का कारण बन जाती है। यदि पति क्रोधी हो तो शांत स्वभाव वाली पत्नी भी कई स्थितियों में खिन्न हो उठती है। फिर यह घर की बात ही पति या पत्नी अपने, किसी प्रगाढ़ मित्र या सहेली के समक्ष कह बैठते हैं। कई बार ऐसी ना समझी भी हो जाती है कि दोनों में से एक पक्ष को संपुष्ट करने के लिए बच्चों के समक्ष भी कुछ इस ढंग से दूसरे के बारे में कह बैठते हैं कि उनके मन में भी कुंठा की गांठ बंध जाती है।

मानवीय स्वभाव की यह दुर्बलता ही कही जा सकती है कि वह अपने पक्ष को सही सिद्ध करते-करते दूसरों के बारे में एक गलत सी तस्वीर प्रस्तुत कर देता है और इस ढंग से सहानुभूति की प्राप्ति का प्रयास होता है। पर जब बाद में स्थिति सुधर जाती है तो फिर हम सोचते भी हैं, पश्चात्ताप भी होता है कि हम जो गलत चित्र अपने मित्र या सखी के समक्ष प्रस्तुत कर चुके हैं उसे किसी प्रकार से वह भूल जाएं। फिर हमारी यह भी इच्छा होती है कि अब हम प्रशंसा के जो शब्द कह रहे हैं, उसे ही सब स्वीकार कर लें। परन्तु एक बार लगी हुई गांठ तो शायद कभी ही टूट जाती हो।

इस प्रकार हमारे असंतुलित क्षणों का परिणाम समक्ष आता है। परन्तु हम तो एक दूसरे की प्रतिष्ठा को कम करके चुका-चुके होते हैं। उधर बालकों में भी समय के साथ यह भावना ही बढ़कर उपेक्षा का रूप धारण करके समक्ष आ जाती है। पर इस में बेचारे बालकों का क्या दोष है। किन्तु यह बीज तो हमने बोया भी स्वयं ही है। स्थिति ऐसी हो जाती है कि उसमें पश्चात्ताप के अतिरिक्त और तो कुछ भी बचता ही नहीं।

किन्तु यदि अशांति के क्षणों में मानव थोड़ी सी सावधानी बरते तो फिर अप्रिय घटनाएं उसी अनुपात में कम हो जाएंगी। प्रत्येक प्राप्ति साधना का ही फल होती है। यदि हम थोड़ा सा प्रयास करें तो अपनी इस दुर्बलता पर निश्चित रूप से ही विजय पा सकते हैं।

प्रायः यह देखा जाता है कि पति की थोड़ी सी बात पर रुष्ट हो जाने वाली बहनें अपनी प्रवृत्ति पर पर्दा डालने के लिए यह कह देती हैं कि जहां चार बर्तन होते हैं, वे खड़कते ही हैं। किन्तु वे भी इस तथ्य को नकार तो नहीं सकतीं कि इस खड़कने से जो आवाज होती है वह सुनने में कानों को प्रिय तो नहीं लग सकती।

अतएव अच्छा यही है कि हम ऐसी अप्रिय झंकार को रोकने के लिए ही सक्रिय क्यों न हों। उससे बचने के लिए पहले ही शांति सहित सुविचारित प्रयास क्यों न करें। तथ्य है कि क्षण भर के आक्रोश को नियन्त्रित करके हम बर्तनों को खड़कने न देने की स्थिति पैदा कर सकते हैं।

यदि हम असंतुलन के इन क्षणों में भी विवेक से काम लें तो अपने बालकों को कुसंस्कारित होने से पहले रोक सकती हैं और उनका यह संतोष ही पारिवारिक सुख की नींद को सुदृढ़ कर सकता है। ●

मंत्रीजी बेहोश हो गये। कुशलतम चिकित्सक ने मंत्रीजी की जांच की, फिर बोला, "तुरंत ऑपरेशन जरूरी है, दिल्ली जाना होगा।"

एक घंटे तक हवाई अड्डे पर मंत्रीजी के फोटो तो लिये जाते रहे, पर उन्हें हवाईजहाज में चढ़ाया नहीं गया। चिकित्सक झुंझलाया—"मंत्रीजी को हवाईजहाज में क्यों नहीं चढ़ाते?"

"अभी तक फूलमालाएं नहीं आ पायी हैं," एक अधिकारी ने बताया।

"उन की क्या जरूरत है?" चिकित्सक ने चिढ़ कर पूछा।

"कुछ देर इंतजार कर लेने में हर्ज क्या है···मेरी तबीयत पहले से ठीक है," मंत्रीजी ने तुरंत आंखें खोल कर कहा। ●

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

नारी जागरण में आर्यसमाज की भूमिका

—श्रीमती कमला सिंधवी

●●●

सन् १९७५ को अन्तर्राष्ट्रीय महिला वर्ष के रूप में सर्वत्र मनाया गया है। नारी स्वतन्त्रता और नारी जागरण के चर्चे आज आम बात है। लगता है नारी—स्वातन्त्र्य के इस आंदोलन की प्रतिध्वनियां सुदीर्घकाल तक हमारे बीच रहेंगी। कांग्रेस संसदीय दल की कार्यकारिणी ने भी अनुरोध किया है कि महिलाओं के साथ सभी प्रकार के भेदभावों को समाप्त किया जाये और उन्हें प्रत्येक क्षेत्र में पुरुषों के समान अधिकार मिल सके, इसके लिए कानूनी कार्यवाही की जाये। आवश्यकतानुसार सम्बन्धित कानूनों में संशोधन भी किये जायें।

आर्यसमाज ने इस दिशा में बहुत पहले ही अद्भुत कदम उठाकर, नारी मन में चेतना, जागृति और साहस की लहर उत्पन्न करने का प्रयत्न किया था। इस वर्ष जबकि आर्यसमाज अपना शताब्दी समारोह मना रहा है नारी अधिकारों और नारी सुधारों के प्रति उसके योगदान और दृष्टिकोण दोनों का स्मरण होना ऐसे अवसर पर स्वाभाविक है। नारियों को जब परदे और घर की देहरी से आगे बढ़ने तक पर समाज ने प्रतिबन्ध लगा रखे थे उस समय आर्यसमाज ने उनके विरुद्ध आंदोलन छेड़ा था। कन्याओं के विद्यालय प्रारम्भ में जब आर्यसमाज ने खोले तो हिन्दुओं ने ही उसको यह कहकर विरोध किया कि लड़कियों को पढ़ा-लिखाकर मेम थोड़े ही बनाना है।

आर्यसमाज ने समाज सुधार की शृंखला में भी नारियों की समस्या को प्राथमिकता दी और समाज में व्याप्त पारिवारिक कुरीतियों को समूल उखाड़ फैंकने के लिए कमर कस ली। हिन्दू महिलाओं की दयनीय दशा को देखकर रोना आता था। ईसाईयों ने तो कभी सिद्धांत रूप में ही नारियों में जीवात्मा नहीं मानी थी। पर हिन्दु समाज तो उसे प्रत्यक्ष व्यवहार में परिणत कर रहा था। महर्षि दयानन्द और उनके आर्यसमाज ने हिन्दु समाज को एक नया क्रान्तिकारी दृष्टिकोण दिया, जो आगे चल कर परिवर्तन के मोर्चे को सुदृढ़ करने में सहायक सिद्ध हुआ। स्वामी जी इस युग के उन महापुरुषों में थे जिन्होंने एक मन्दिर के चबूतरे पर खेलती हुई ६ वर्ष की बालिका को देखकर अपना मस्तक झुका दिया। देखने वाले ने जब यह प्रश्न किया कि वैसे आप मूर्ति पूजा का खण्डन करते हैं किन्तु मूर्ति का यह प्रभाव है कि आपका मस्तक अपने आप झुक गया। उन्होंने उत्तर दिया—मैंने अपना माथा मूर्ति को नहीं झुकाया अपितु इस छोटी सी बालिका को झुकाया है। मैं इसका अभिवादन करके मातृ-शक्ति का अभिवादन कर रहा हूँ।

शिक्षा के क्षेत्र में पहल

नारियों की शिक्षा के क्षेत्र में भी आर्यसमाज ने युगान्तरकारी परिवर्तन प्रस्तुत किये। 'स्त्री शूद्रौनाधीयातामिति श्रुतेः' वाली मनघड़न्त श्रुति को आर्यसमाज के प्रवर्तक स्वामी दयानन्द जी ने कभी प्रामाणिक नहीं माना बल्कि यजुर्वेद के आधार पर उन्होंने यह प्रतिपादित किया—'वेदों का प्रकाश ईश्वर ने सब के लिए किया है। अतः यह अनिवार्य हो जाता है कि लड़कों और लड़कियों को विद्वान और विदुषी बनाने के लिए तन-मन-धन से प्रयत्न किया जाए जिससे स्त्रियां भी वेदाभ्यास करके गार्गी, मैत्रयी आदि विदुषियों की भांति विदुषी बन सके और तेजस्वी व्यक्तित्व विकसित कर सकें, स्त्रियों के पढ़ने का निषेध आर्यसमाज ने सदैव 'मूर्खता, स्वार्थपरता और निर्बुद्धि' का परिचायक माना है। स्वामी जी के अनुसार विद्वान पति और अनपढ़ एवं असंस्कृत पत्नी गृहस्थी की गाड़ी को सुचारुरूप से कदापि नहीं खींच सकते। शिक्षित नारी ही अपने अधिकारों के प्रति मूलरूप से जागरूक रह सकती है इसीलिये उन्होंने पुरुषों के समान स्त्रियों को भी व्याकरण, धर्मशास्त्र, आयुर्वेद, गणित, शिल्प आदि सभी शिक्षाओं के लिए योग्य ठहराया।

१९वीं सदी के मध्य भाग में परदे की प्रथा तेजी से बढ़ रही थी। वैदिक और बौद्धकाल तक भारतीय स्त्रियों में पर्दे की प्रथा का उल्लेख नहीं मिलता। मुगल शासन काल की देन के रूप में इस कुप्रथा ने स्त्रियों की स्वतन्त्रता का हरण किया। आर्यसमाज ने स्त्री शिक्षा के साथ-साथ इस ओर भी ध्यान दिया और सार्वजनिक कार्यक्रमों एवं समारोहों में स्त्रियों की उपस्थिति पर बल दिया। धीरे-धीरे आर्य समाज के प्रयत्नों से परदे की प्रथा एक ढोंग समझी जाने लगी और आर्य स्त्रियां इसे अपना अपमान समझने लगी।

सती प्रथा के विरुद्ध भी आर्यसमाज ने अपनी बुलन्द आवाज उठाई और विधवाओं के मन और मस्तिष्कों पर नई चेतना के बीज अंकुरित किये। उन्हें नव-जीवन और नव दिशा मिल सके, इसके लिए पुनर्विवाह की व्यवस्था करने का प्रयास किया और उसे अपना सम्पूर्ण क्रियात्मक समर्थन दिया।

बाल विवाह के सम्बन्ध में सहस्रों कठिनाइयों एवं

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

बाधाओं के बावजूद आर्यसमाज ने प्रगतिशील कदम उठाकर इस कुरीति के विरुद्ध अभियान छेड़ा था। धीरे-धीरे विवाह योग्य आयु का स्तर ऊंचा होता गया और बहुत छोटी आयु के विवाह लगभग बन्द होने लगे। सेन्ट्रल असेम्बली में राजस्थान के प्रसिद्ध आर्यसमाजी नेता दीवान बहादुर हरबिलास जी शारदा ने तो इसके लिए कानून भी बनवाया था। आर्यसमाज का कहना था 'बाल्यावस्था में विवाह से जितनी हानि पुरुष की होती है उससे अधिक स्त्री की होती है जैसे कच्चे खेत को काट लेने से अन्न नष्ट हो जाता है। कच्चे फल और ईख में मिठास नहीं होती, ठीक उसी तरह छोटी आयु में जो अपनी सन्तानों का विवाह कर देते हैं उनका वंश बिगड़ जाता है' बाल विवाह की तरह वृद्ध विवाह को भी हेय दृष्टि से देखा जाने लगा और लोग वृद्ध के लिए कुमारी कन्या से विवाह को त्याज्य मानने लगे।

आर्य समाज ने बहुविवाह का भी जमकर विरोध किया और एक विवाह के आदर्श सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। यही नहीं आर्यसमाज ने स्त्रियों में जागृति के लिए यह सन्देश भी दिया कि विवाह के लिए केवल माता-पिता की अनुमति ही पर्याप्त नहीं बल्कि वर-कन्या की अनुमति को प्राथमिक मान्यता दी जानी चाहिए।

परिवार में नारी की प्रतिष्ठा के विषय में स्वामी जी पूर्णतया मनु से सहमत थे कि 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता:' उन्होंने जननी का स्थान सर्वोपरि मानकर नारी के गौरव को सदा के लिए अक्षुण्ण बना दिया।

दहेज की अग्नि से दग्ध समाज को आर्यसमाज ने शीतल छींटे दिये और दहेज के परिणामों की ओर समाज का ध्यान आकर्षित किया। बिना दहेज के गरीब घरों की जिन कन्याओं के हाथ पीले नहीं हो पाते थे उन्हें आर्य समाज का आंदोलन वरदान बनकर आया।

इस प्रकार आर्यसमाज ने परम्परा को संशोधित रूप दिया और इस गलत धारणा को निर्मूल कर दिया कि भारतीय धर्म और संस्कृति में नारी के स्वतन्त्र विकास और गौरव के लिए कोई स्थान नहीं है। स्वामी जी ने महिलाओं की मर्यादा और शालीनता की सुरक्षा रखते हुए उसकी मुक्ति और विकास का मार्ग प्रशस्त किया। यह स्मरणीय है कि दयानन्द जी ने जिस युग में नारी जागरण का शंखनाद किया था उस समय हमारा समाज विकृत और पतनोन्मुख था। भारत राजनैतिक दासता के कारागार में बन्दी था। हम स्वयं अपने भाग्य विधाता नहीं थे। किन्तु अज्ञान के अन्धेरे को चीर कर स्वामी जी का उज्ज्वल सन्देश अरुणोदय बनकर भारतीय आकाश पर छा गया। स्वामी जी की कल्पना एक विवेकशील और गतिशील समाज की कल्पना थी, एक ऐसे समाज की कल्पना थी जो अपने अतीत के गौरव को आत्मसात कर रसके औ उसी के अनुरूप एक नये भविष्य का निर्माण कर सके। आज जबकि हम स्वतन्त्र और स्वाधीन हैं, नये समाज की संरचना में संलग्न हैं और नारी स्वतन्त्रता के आधारभूत सिद्धान्त को स्वीकार कर चुके हैं। एक बार फिर वर्तमान परिप्रेक्ष्य में स्वामी दयानन्द जी के सन्देश की सन्जीवनी शक्ति को सामाजिक जीवन में ग्रहण करने की अपेक्षा है, नारी जागरण के मर्म की विवेक के साथ व्याख्या की जरूरत हैं।

विचित्र जगत्

रूस के एक जीव-जन्तु विज्ञानवेत्ता ने एक ऐसे समुद्री पशु की खोज की है, जिसके दाढ़ी है। आज तक विज्ञान-वेत्ताओं को 13 प्रकार के ऐसे जीव-जन्तुओं की जानकारी थी। किन्तु यह पशु उन सबसे अनोखा है तथा गहन जल में पाया जाता है। उसका पेट अन्य पशुओं के तुल्य भीतर की ओर नहीं होता अपितु बाहर की ओर होता है। प्रभु लीला भी विचित्र ही है।

× × ×

पश्चिमी जर्मनी के वैडफोन नगर के महापौर का यह दावा है कि उनके नगर के कुत्ते निश्चित समय पर ही भौंकते हैं, जिससे नागरिकों को विश्रति में बाधा न पड़े। इस महानगर में रात्रि के दस बजे से प्रातः ७ बजे तक और अपराह्न एक से तीन बजे तक विश्रान्ति का समय है। उस समय किसी प्रकार का शोर नहीं होना चाहिए और नगर के कुत्ते भी इतने प्रशिक्षित हो गए हैं कि उस समय वे भी नहीं भौंकते।

× × ×

राजस्थान विश्वविद्यालय के विज्ञानवेत्ताओं का एक दल पिछले दिनों मध्य प्रदेश के दौरे पर गया था। इस दल को वहां ऐसे ८० व्यक्ति मिले हैं, जो अपने पूर्व जन्म का विवरण बता सकते हैं। ये विज्ञानवेत्ता जिन्हें पूर्व जन्म में विश्वास नहीं है, विज्ञान के माध्यम से इस पहेली का समाधान खोजना चाहते हैं। वे नितान्त आश्चर्यचकित हैं कि वे उन बातों को किस प्रकार से बताएं कि जो उनके अनुभव में इस जीवन में कभी नहीं आईं।

हिन्दू धर्म की तो यह मान्यता है कि मानव मर कर जन्मता है। विज्ञनावेत्ता इस पहेली का समाधान कैसे खोजेंगे ?

फिर टकरा जाएंगे

एक अफीमची अंधेरे में खम्भे से टकरा गया। झुंझलाकर बोला—'कम्बख्तों ने इस खम्भे को नरक में क्यों नहीं खड़ा किया ?'

एक सुनने वाला बोला—'ऐसा न कहिये अगर इसे वहां खड़ा करवा दिया गया तो आप फिर टकरा जायेंगे।'

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

स्वप्न स्वास्थ्य के सूचक

विशेषज्ञों का कथन है कि किसी भयंकर रोग के चिन्ह शरीर पर प्रकट होने से पहले ही सपनों का नये तरीके द्वारा विश्लेषण करके उस रोग के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त की जा सकती है।

६३ वर्षीया अ० वैसिले कासकिन, जोकि एक स्वप्न विशेषज्ञ हैं, विश्वास रखते हैं कि स्वप्नों की व्याख्या से होने वाली बीमारी का पता लगाने में आसानी अनुभव होती है और इनके लक्ष्य प्रकट होने के पूर्व उनका उपचार किया जा सकता है। ऐसा करके उन्होंने अनेकों के प्राण बचाए हैं।

डा० कासकिन ने 30 वर्षों से शारीरिक रोगों और स्वप्नों के सम्बन्धों में खोज की है। उनका कथन है कि जब भी किसी भयंकर रोग ने घर करना होता है तो उस मनुष्य को उसके सम्बन्ध में बार-बार स्वप्न आते हैं।

उनकी मान्यता है कि शरीर के घावों के सम्बन्ध में बार-बार आ रहे स्वप्न सर्वाधिक भयानक होते हैं। ये प्रायः भयावह रोगों अर्थात् कैन्सर, लिवर, गुर्दे व हृदय रोगों के प्रतीक होते हैं।

यहां पर डा० कासकिन के वर्षों लम्बे अध्ययन और उसके विश्लेषण के आधार पर कुछ स्वप्नों और उनके द्वारा होने वाले रोगों के सम्बन्ध में जानकारी दी जा रही है।

(1) छाती पर जख्म का स्वप्न दिल के दौरे की आशंका प्रकट करता है।

(2) सिर पर चोट या चेहरे और सिर के कुचले जाने के स्वप्न सम्भवतः दिमागी ट्यूमर (फोड़े) की सम्भावना प्रकट करते हैं।

(3) पेट पर जख्म के स्वप्न यकृत या गुर्दे की बीमारी दर्शाते हैं।

(4) किसी का पीछा करने या अपने पति या पत्नी को किसी अन्य के साथ देखने के स्वप्न मानसिक रोग के सूचक हैं।

(5) श्वांस लेने में कठिनाई के स्वप्न टी० बी० या फेफड़े के कैन्सर के प्रतीक हैं।

(6) ऐसे स्वप्न जिसमें चलने में कठिनाई हो, वे रीढ़ की हड्डी के फोड़े के प्रतीक हैं।

(7) पहाड़ की सीध से गिरने का स्वप्न आंतों की खराबी का सूचक है।

डा० कासकिन एक घटना के सम्बन्ध में बताते हैं कि जिसमें एक दूसरे डाक्टर को स्वप्न ने रोग के सम्बन्ध में सूचित किया।

उस डाक्टर को स्वप्न हुआ कि उसके एक युवा रोगी पर मगरमच्छों का आक्रमण हुआ है। डाक्टर ने रोगी को बचाने का प्रयास किया किन्तु वह बच न सका। बाद में, उसने रोगी को गली में लेटा पाया। उसके पेट पर लम्बा घाव था और उसका दायां गुर्दा बहुत बुरी तरह से खराब था।

स्वप्न हमारे स्वास्थ्य की देखभाल के लिए एक तरह से सन्तरी होते हैं। उन्होंने आगे कहा कि दिमाग तक शरीर के हर भाग से नसें आती हैं जोकि भावी रोग के सम्बन्ध में संकेत देती रहती हैं। जिन्हें कि हमारी अधिचेतना स्वप्न में बदल देती है।

क्योंकि विभिन्न रोगों के स्पष्ट तौर पर विभिन्न स्वप्न आते हैं और एक कुशल व्याख्याकर्ता उनके आधार पर बार-बार एकदम सही व्याख्या कर जाता है।

स्वप्न के बाद दिल के दौरे आदि के लक्ष्य दो सप्ताह से एक वर्ष के बाद तक प्रकट होने की मान्यता इन चिकित्सक महोदय है। उनका यह भी कथन है कि अल्प-शिक्षित व्यक्ति को इन स्वप्नों द्वारा कोई भी अनुमान सहज ही नहीं लगा लेना चाहिए।

उनका यह भी मत है कि जब भी कोई स्वप्न दुबारा आए तो अपने डा० को मिलिए और उन्हें सब कुछ बता दीजिए। हो सकता है कि डाक्टर आपके स्पप्न की पूर्णतः व्याख्यान कर पाए, मगर उसका ध्यान उस विशेष हिस्से की ओर तो जा सकता है, जिसका उस स्वप्न से सम्बन्ध हो।

स्वप्न विशेषज्ञों का कथन है कि अभी स्वप्नों के विश्लेषण के सम्बन्ध में अध्ययन जारी है और एक ऐसा समय आएगा जबकि यह अध्ययन धीरे-धीरे सारे सोवियत संघ में फैल कर लोगों को लाभान्वित करेगा।

कोई सत्य दूसरे सत्य का विरोधी नहीं हो सकता।

× × ×

अगर चाहते हो कि मरते और सड़ते ही तुम भला न दिए जाओ तो या तो पढ़ते लायक चीजें लिखने या लिखने लायक काम करो।

× × ×

कर्मकांड से, प्रजनन से—धर्म से नहीं, अमल तो त्याग से प्राप्त होता है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

बुलबुल और अबाबील

—विनय

क्या कभी तुमने सुना है किसी बुलबुल का मधुर स्वर और देखा है उसे, तुममें से कई ने तो उसे अवश्य ही देखा होगा। किन्तु ऐसा ही एक और भी छोटा सा पक्षी है, नाम है उसका अबाबील। यह पक्षी सागर के तट पर ही पाया जाता है, इसलिए शायद ही तुममें से कोई कभी उसे देख पाया हो। इस पक्षी का ऐसा स्वभाव है कि यह वातावरण के अनुसार अपना स्थान भी बदलता रहता है। वह भी गाता है किन्तु उसके गीत में बुलबुल के गीत जैसा दर्द नहीं, अपितु वह हर्ष और उल्लास से परिपूर्ण होता है।

भइया, क्या तुमने सुनी है वह लोक कथा कि कोयल के स्वर में दर्द और अबाबील के स्वर में हर्ष क्यों है? अच्छा नहीं सुनी है तो आज हम तुम्हें सुनाते हैं। यह लोक कथा ग्रीक अर्थात् यूनानी है। तो लो सुनो—

एक था राजा। उसकी थी तो दो बेटियां। इनमें से एक का नाम था 'फिलोमिला' और दूसरी का था 'प्रोण'। उसने थरेशियन नरेश टोरीयस से कर दिया प्रोण का विवाह। किन्तु टोरीयस चाहता था कि उसका विवाह फिलोमिला से हो। कुछ दिन बाद प्रोण के यहां एक शिशु ने जन्म लिया। तदुपरान्त टोरीयस ने प्रोण की जीभ काट दी और यह प्रचार करा दिया कि प्रोण का देहांत हो गया है। उसके बाद उसका विवाह फिलोमिला से हो गया। उधर प्रोण ने क्रोध में आकर अपने शिशु की हत्या कर दी और मांसाहारी टोरीयस को खिला दिया। था भी टोरीयस अपनी आदतों से राक्षस ही। फिलोमिला को भी अपनी बहन के बारे में विदित हो गया। अतः वे दोनों बहन ही इस अत्याचारी के शिकजे से निकल कर पलायन कर गईं। क्रोधी टोरीयस कुल्हाड़ी हाथ में उठाकर उनका पीछा करने के लिए निकल पड़ा। अन्त में दोनों बहनों ने भगवान से प्रार्थना की कि प्रभु हमें पक्षी बना देना। भगवान ने उनकी सुन ली और दूसरे जन्म में उन्हें पक्षी ही बना दिया। इनमें से फिलोमिला तो बन गई बुलबुल और प्रोण बनी अबाबील।

आज भी अबाबील (प्रोण) सदैव स्वयं को प्रसन्न रखने का प्रयास करती है क्योंकि वह अतीत की घटनाओं को स्मरण रखकर भी अपने भविष्य को बनाते हुए प्रसन्न रहने का प्रयास करती है। इसीलिए वह अपनी वाणी सदैव ही हर्षोल्लास का प्रदर्शन करती है, जबकि बुलबुल (फिलोमिला) अतीत में ही खोई रहती है। वह अपनी पीड़ा को अपने दर्दीले स्वर में उभारती है और सदा ही अन्यायी को कोसती रहती है। इसीलिए बुलबुल का स्वर नितान्त मार्मिक होता है।

समझ गए भइया इन दोनों के स्वरों में अन्तर का मर्म। ●

आइए हंसें

किसी स्थान पर एक दुबला पतला आदमी एक मोटे आदमी के शरीर पर बैठकर उसे पीट रहा था और साथ ही स्वयं रोए भी जा रहा था। उधर से गुजरते हुए एक व्यक्ति ने उससे आश्चर्य चकित होकर पूछा "भाई बात क्या है? एक तो तुम इस मोटे आदमी को पीट रहे हो और साथ ही साथ रोते भी जा रहे हो?"

पतला आदमी रोते-रोते ही बोला "मैं इसे पीट तो इसलिए रहा हूं कि इसने मुझे कमजोर कहा था और रो इसलिए रहा हूं कि जब यह मोटा आदमी उठकर बैठ जाएगा तो मेरी हड्डी पसली भी सही सलामत नहीं बचेगी।

× × ×

किसी नगर में एक प्रसिद्ध अभिनेता आया तो उससे 'आटोग्राफ' लेने वालों की भीड़ लग गयी। वह भी पहले तो 'आटोग्राफ' देते ही गए। किन्तु अन्ततः परेशान होकर उन्होंने एक सज्जन की 'आटोग्राफ' पुस्तिका में एक गधे का चित्र ही बना दिया।

उस सज्जन ने चित्र देखा तो एक क्षण खिन्न हुए और फिर संभल गए। और उन्होंने नहले पर दहला मारते हुए अभिनेता महोदय से कहा "श्रीमान्! मुझे तो आपका 'आटोग्राफ' चाहिए था, 'फोटोग्राफ नहीं।"

× × ×

दूधिया—कल से दूध के भाव बढ़ जायेंगे!

ग्राहक—"क्यों भाई क्या विशेष बात है?"

दूधिया—क्योंकि कल नलों में पानी प्रातः और सायंकाल दो-दो घंटे बंद रहेगा।

× × ×

एक यात्री पंक्ति में खड़े दूसरे यात्री से बोला जो पहले आई एक बस छोड़ चुका था और दूसरी में भी चढ़ने की कोई सक्रियता न दिखा रहा था "क्यों भाई साहब क्या यह बस भी आपको 'सूट' नहीं करती?

उस यात्री ने क्रोध में आकर प्रश्न करने वाले यात्री की ओर देखा और बोला "मुझे बस 'शूट' क्यों करे, 'शूट' करे तुम्हें।"

× × ×

शानदार दावत में पेट से भी अधिक खाकर एक भर्राए हुए सज्जन व्यंजनों की प्रशंसा के पुल बांधने लगे तो बोलते ही चले गए। उन्हें शायद भोजन अजीर्ण हो रहा था, किन्तु जिनको रोक कर वे भाषण झाड़ने में तल्लीन थे, वे लोग 'बोर' होते जा रहे थे। तभी वक्ता सज्जन ने कहा "यदि मैं एक कचौड़ी और खा जाता तो शायद मैं बोल ही न पाता।"

सुनने वालों में से एक ने कहा "अच्छा होता कि आप एक कचौड़ी और खा ही लेते।" ●

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

महान् वैज्ञानिक जगदीशचन्द्र बोस

अपना देश सोने की चिड़िया कहा जाता रहा है । भला क्यों ? इसीलिए ना कि इस देश की धरती सोना उगलती है, बड़े-बड़े महापुरुषों को भी जन्म देती रही है। राम और कृष्ण का नाम तो तुमने सुना ही होगा, शिवाजी और प्रताप की वीरता की कहानियां भी अवश्य पढ़ी होंगी । देव दयानन्द और स्वामी श्रद्धानन्द की चर्चा भी आपने परिवार में जरूर सुनी होगी। ये सभी वे महापुरुष हैं कि जिनके कारण हमारे देश की धरती रत्नों की खान कही जाती है।

हमारे देश में महान् वीर और संन्यासी जन्में हैं तो वैज्ञानिक भी पैदा हुए हैं, जिनका सारा संसार ही ऋणी है। आज एक ऐसे ही वैज्ञानिक की कहानी हमें आपको सुनानी है । यह महान् वैज्ञानिक थे श्री जगदीशचन्द्र बोस। वे 30 नवम्बर, 1857 को जन्मे थे। अर्थात् अंग्रेजों के विरुद्ध हुए प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम के केवल एक वर्ष बाद।

श्री जगदीशचन्द्र जब बालक थे, तभी उनके शिक्षकों पर भी उनकी बुद्धिमत्ता की धाक बैठ गई थी । उन्होंने अपनी शिक्षा पहले कलकत्ता में प्राप्त की और फिर पढ़ने के लिए लन्दन चले गए। वहां से पढ़ाई पूर्ण कर 1896 ई० में स्वदेश अर्थात् भारत लौटे। वापस आने पर वे कलकत्ता के एक कालेज में प्रोफेसर नियुक्त हो गए । उन्होंने विद्युत् तरंगों (बिजली की लहरों) के बारे में ऐसा अनुसन्धान किया कि सारे संसार में ही उनके नामकी धूम मच गई।

इस खोज में सफलता प्राप्त कर लेने के बाद उन्होंने अपना ध्यान पौधों की बनावट के बारे में खोज करने की दिशा में लगाया । उन्होंने अपने अनुसन्धान से यह प्रमाणित कर दिया कि जिस प्रकार मनुष्य सोता है और जागता है, उसी प्रकार पौधे भी सोते हैं, जागते हैं और उनमें भी जीवन है। जैसे हम साँस लेते हैं और बीमार पड़ने की अवस्था में औषधियां लेते हैं उसी प्रकार पौधे भी सांस लेते हैं और उनपर भी औषधियों का असर होता है।

इस महान् वैज्ञानिक ने अपनी सफलता का कारण अपने परिश्रम को बताया था। एक बार उन्होंने छात्रों के समक्ष भाषण करते हुए कलकत्ता में जो वाक्य कहे थे, वे सभी भाई-बहनों के लिए प्रेरणाप्रद हैं । उन्होंने कहा था :—

"जो लोग दूसरों के भरोसे पर रह कर काम करते हैं, उनका सारा उत्साह मन्द पड़ जाता है। आप लोग जीवन में कठिनाइयों को जितना अधिक हंसते-हंसते झेलोगे, आपकी उन्नति का मार्ग उतना ही साफ होता चला जाएगा। कठिनाई सह कर उस पर विजय पाने से ही आप आदर प्राप्त कर सकते हो।"

यह बात उनकी सफलता का सूत्र थी। क्योंकि जब प्रारम्भ में उन्होंने अपनी खोजों का क्रम आरम्भ किया था तो लोग उन्हें सनकी और सिरफिरा भी कहते थे । उनके उत्साह को दबाने के लिए अनेक लोगों ने उनसे निराशाजनक बातें भी कही थी। किन्तु इन सब बातों के बावजूद वे निरन्तर 20 वर्ष तक अपने अनुसन्धान कार्य में लगे रहे और अन्ततः सफलता ने उनके चरण चूमें।

23 नवम्बर, 1937 को इस महान् भारतीय वैज्ञानिक का निधन हुआ था। किन्तु यह महामानव विज्ञान के क्षेत्र में नया ज्ञान देकर भारत का नाम विश्व में उजागर कर गया। आओ हम भी उनके जीवन से प्रेरणा लें और जीवन में कुछ महान काम करने के लिए कर्मक्षेत्र में उतरें।

हम भारत के बाल हैं

—कु० ऋचा

हम भारत के बाल हैं
कोई छोटा समझे हमको
हम युग की नई मशाल हैं।
धर्म, कर्म में होकर आगे।
बुनते हैं समता के धागे॥
नव उन्नति के लिए डटे हैं,
मन के बड़े विशाल है॥
राम कृष्ण आदर्श हमारे
जो ये हिम्मत कभी न हारे
बाधाओं को चूर करेंगे
हम अरिदल के काल हैं॥
दयानन्द से वीरव्रती बन
धर्म हेतु देंगे निज जीवन
श्रद्धानन्द से लेकर श्रद्धा
जला रहे ये मशाल हैं॥
एक हमारी सबकी आशा
हिन्दी प्यारी अपनी भाषा
सत्य धर्म के लिए डटेंगे
उन्नत अपना भाल है॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—जियालाल

शहीद ऊधमसिंह

जिन्होंने लंदन में जनरल डायर की हत्या करके जलियांवाला बाग के खून का बदला लिया था

शहीद-शिरोमणि वीर ऊधमसिंह का जन्म 26 दिसम्बर सन 1899 ई० को सुनाम (पटियाला) में एक निर्धन काम्बोज परिवार में हुआ था। इनके पिता का नाम श्री चुहड़राम और माता का नाम श्रीमती नारायणी था, पर सिख सम्प्रदाय में दीक्षित होने के पश्चात इन्होंने अपने नाम क्रमशः टहलसिंह और हरनाम कौर रख लिये थे। पिता सुनाम से पांच मील दूर पपली नामक स्थान पर रेलवे फाटक पर चौकीदारी करते थे। वेतन कम मिलने के कारण वे बेरियों के बागों की बहार भी खरीद लिया करते थे।

ऊधमसिंह पांच ही वर्ष के थे कि माता का साया उनके सिर से उठ गया। निर्धनता और विपत्तियों से पीड़ित पिता ने 1908 में नौकरी छोड़ दी और रोजगार की तलाश में अमृतसर की राह ली। अमृतसर पहुंचते-पहुंचते रास्ते में पिता सख्त बीमार पड़ गए और उन्हें शहर से बाहर ही जोगियों के एक डेरे में ठहरना पड़ा, जोगियों ने उनकी बहुत सेवा की और उन्हें अस्पताल में दाखिल कराया, लेकिन स्वास्थ्य लाभ न हो सका और वे अस्पताल में ही स्वर्ग सिधार गए।

सुनाम के एक प्रभावशाली व्यक्ति सरदार चंचल सिंह के प्रयास से ऊधमसिंह और उनके बड़े भाई साधुसिंह को केन्द्रीय सिख अनाथालय अमृतसर में प्रवेश मिल गया। वहां वे पढ़ाई-लिखाई के साथ-साथ दस्तकारी का काम भी सीखने लगे। कुछ वर्ष पश्चात बड़े भाई भी इस संसार से चल बसे। माता, पिता और भाई की मौतों से बालक ऊधमसिंह के मन पर गहरा प्रभाव पड़ा। मृत्य से इतना अधिक परिचय होने से मानो उसका भय उनके मन से बिल्कुल ही निकल गया और उन्होंने मौत से टक्कर लेने का दृढ़ निश्चय कर लिया।

जोगियों के डेरे में रहते हुए ही ऊधमसिंह का सम्पर्क निकट में स्थित डा० सैफुद्दीन किचलू के 'स्वराज्य आश्रम' से हो गया था। जिसे उन्होंने अनाथालय में रहते हुए भी निरन्तर जारी रखा। यहीं से उनके हृदय में देशभक्ति और राष्ट्र-प्रेम के बीज अंकुरित हुए और लाला लाजपतराय जैसे देशभक्त नेताओं और म० मोतसिंह आदि क्रांतिकारियों से मेल होने पर इनके मन में क्रांति की चिनगारियां सुलग उठीं।

मैट्रिक की परीक्षा पास करने और कला में विशेष योग्यता प्राप्त कर लेने के पश्चात ऊधमसिंह ने 1918 में जलियां वाला बाग के पास एक आर्ट-स्टुडियो खोला। कहने को तो यह आर्ट-स्टुडियो था, पर वास्तव में यह क्रांतिकारियों की गतिविधियों का अड्डा था।

भारतीयों द्वारा प्रथम विश्व-युद्ध में बहाए गए खून के बदले अंग्रेजों ने मार्च 1919 में भारत को रोलट एक्ट का उपहार दिया। इस एक्ट के खिलाफ देश भर में रोष का वातावरण तैयार हो गया। चारों ओर जलसों जुलूसों और प्रदर्शनों की एक बाढ़ सी आ गई और विद्रोह की ज्वालाएं भी भड़क उठीं। पंजाब भी इसकी लपेटों से न बच सका और देखते ही देखते इस आन्दोलन का केन्द्र बन गया।

अमृतसर में इस आन्दोलन के नायक थे डा० किचलू और डा० सत्यपाल। 9 अप्रैल को रामनवमी का त्यौहार अमृतसर के हिंदुओं और मुसलमानों ने राष्ट्रीय पर्व के रूप में मिलकर मनाया। हिन्दुओं और मुसलमानों के इस अभूतपूर्व संगठन और मेल को देखकर पंजाब के गवर्नर सर माइकल ओ डायर के पांव तले की जमीन खिसक गई। 10 अप्रैल को डा० किचलू और डा० सत्यपाल को गिरफ्तार कर लिया गया।

जनता और अधिक भड़क उठी। सरकार की ओर से दमनचक्र और जोर शोर से शुरू हुआ। कई स्थानों पर गोलियां चलीं और अनेक व्यक्ति मारे गए। शहर भर में इस अत्याचार के विरुद्ध गम और गुस्से की लहर दौड़ गई। हिन्दू कालेज में एक जलसा हुआ जिसमें 13 अप्रैल वैशाखी के दिन जलियांवाला बाग में दोपहर बाद चार बजे विरोध सभा करने का निर्णय किया गया।

सभा को असफल करने के लिए सरकार की ओर से अनेक प्रयत्न किए गए। परन्तु 13 अप्रैल को निश्चित समय से पहले ही लोग हजारों की संख्या में जलियां वाला बाग में इकट्ठे हो चुके थे। सभा की कार्यवाही आरम्भ हुई और नेताओं ने अपने जोशीले भाषण शुरू किए। सर माइकल ओ डायर ने स्थिति पर काबू पाने के लिए जनरल डायर को पहले से ही कड़े से कड़े कदम उठाने के आदेश दिये हुए थे। अतः डायर 150 हथियारबन्द गोरे सिपाहियों, बख्तरबन्द गाड़ियों और मशीनगनों के साथ

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

बाग में पहुंच गया और बिना चेतावनी दिए अन्धाधुन्ध गोली चलाने का आदेश दे दिया।

सभा में खलबली मच गई। बाग के तंग रास्ते को फौज ने रोका हुआ था। इसलिए लोग घबराकर इधर-उधर भागने लगे। लोग जिधर जाते, उधर ही गोरों की गोलियां उनका पीछा करतीं। देखते ही देखते लाशों के ढेर लग गए। बाग में स्थित एक कुआं लाशों से भर गया। कहीं शाम को जाकर यह हत्याकांड बन्द हुआ। लगभग दो हजार आदमी मौत के मुंह में चले गए और इससे भी अधिक घायल होकर लाशों के नीचे अर्धमृत अवस्था में तड़प रहे थे।

× × ×

वीर ऊधमसिंह भी अपने एक मित्र के साथ इस सभा में सम्मिलित हुए थे। मित्र गोली लगने से शहीद हो चुका था। ऊधमसिंह किसी विशेष उद्देश्य की पूर्ति के लिए जीवित बच गए। अंधेरा हो चुका था। ऊधमसिंह ने कई सिसकते और कराहते व्यक्तियों को लाशों के नीचे से निकाला और किसी प्रकार उनकी जान बचाई।

इस दर्दनाक और हृदय विदारक घटना को देखकर वीर ऊधमसिंह के दिल पर गहरी चोट लगी और उन्होंने शहीदों के खून से रंगी पवित्र मिट्टी को हाथ में लेकर प्रतिज्ञा की—"मैं शहीदों के खून का बदला लेने और पाशविक अत्याचार और लूटखसोट की वृत्ति वाले ब्रिटिश साम्राज्य का अन्त करने के लिए अपना समस्त जीवन मातृभूमि के अर्पण करता हूं।

ऊधमसिंह अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए अपने काम में जोर-शोर से लग गए। क्रान्तिकारियों से मिलकर अनेक कार्यक्रम तय किए और विदेशी सरकार के विरुद्ध गुप्त संघर्ष और षड्यन्त्रों में जुट गए। क्रान्तिकारी साहित्य का प्रकाशन भारत में सम्भव न था। इसलिए कुछ क्रांतिकारियों के परामर्श से इस प्रयोजन की सिद्धि के लिए वे 1925 में अमेरिका गए।

एक स्वतन्त्र देश के स्वतन्त्र वातावरण में कुछ समय रहकर ऊधमसिंह को स्वतन्त्रता और परतन्त्रता के अन्तर का पता चला और भारत तथा उसके निवासियों के बारे में विदेशियों के विचारों को जानने का अवसर मिला। विदेशों में परतन्त्र भारत की गिरी हुई साख को देखकर उनका दिल रो पड़ा। वे अमेरिका में प्रसिद्ध क्रान्तिकारी हरदयाल एम० ए० से मिले और उनकी सहायता से बहुत सा क्रान्तिकारी साहित्य लिखवा और छपवा कर 1929 में भारत लाने में सफल हो गए।

क्रान्तिकारियों ने इस साहित्य को देश भर में फैला दिया जिससे भारत की जनता में राजनीतिक जागृति उत्पन्न हुई। राजनीतिक प्रचार के लिए ऊधमसिंह अपने जन्म स्थान सुनाम भी गए। इनकी चचेरी बहन और सगे सम्बन्धियों ने इन्हें विवाह के बन्धन में बांधना चाहा, परन्तु उनके प्रयत्न सफल न हो सके। 1927 में वे फिर अमेरिका चले गए और वहां से रूस और जर्मनी की भी यात्रा की। वहां रास बिहारी बोस आदि क्रान्तिकारियों से मिले और बहुत-सा क्रान्तिकारी साहित्य लेकर 1929 में भारत लौटे।

उसी वर्ष वे लाहौर में पकड़े गए और चार साल तक मुल्तान जेल में कैद रहे। छूटते ही वे सुभाषचन्द्र बोस से मिले। वहां से संकेत पाकर वे नेपाल पहुंचे और वहां सन 1857 के स्वतन्त्रता संग्राम के सेनानी नाना फड़नवीस से भेंट की। उनका आशीर्वाद पाकर और राममुहम्मद सिंह नाम से पासपोर्ट बनवाकर वे लन्दन पहुंच गए।

लन्दन में ऊधमसिंह की उपस्थिति से 'फ्री इंडिया सोसाइटी' लन्दन की राजनीतिक गतिविधियां जोर तेज हो उठीं। लन्दन से वे पेरिस, स्विटजरलैण्ड और बर्लिन तक पहुंचे। उन्होंने वहां रहने वाले भारतीयों को देश की स्वतन्त्रता में सहायक होने के लिए प्रेरित किया और स्थान-स्थान पर 'फ्री इण्डिया सोसाइटी' की शाखाएं खोलीं।

1939 में दूसरा विश्वयुद्ध आरम्भ हो गया। सर माइकल ओ डायर, जो रिटायर होने के पश्चात काफी समय से एक बहुत बड़ी रकम पेंशन के रूप में हिन्दुस्थान की अंग्रेजी सरकार से डकार रहे थे। फिर से भारत में किसी बड़े ओहदे पर नियुक्ति के स्वप्न देखने लगे। 13 मार्च 1940 को एक सभा रायल सेन्ट्रल एशियन सोसाइटी लन्दन के तत्वावधान में लार्ड जेटलैण्ड, सेक्रेटरी आफ स्टेट फार इण्डिया, की अध्यक्षता में केक्स्टन हाल लन्दन में हुई। विचाराधीन विषय था 'वर्तमान परिस्थिति में अफगानिस्तान के सम्बन्ध में ब्रिटिश नीति,।

डायर को एशियाई राजनीति के विशेषज्ञ होने के नाते विशेष वक्ता के रूप में आमन्त्रित किया गया था। ऊधमसिंह तो अवसर की ताक में थे ही, एक बड़ी पुस्तक के पन्ने बीच में से रिवाल्वर के आकार में काटकर और उसके अन्दर गोलियों से भरा रिवाल्वर रखकर मंच के बिल्कुल पास ही दीवार के पास जा बैठे। ब्रिगेडियर सर पी० साइक्स के भाषण के पश्चात् डायर बोलने के लिए खड़े हुए।

खड़े होते ही डायर ने अपमानजनक शब्दों का प्रयोग करते हुए भारत और भारतवासियों के विरुद्ध जहर उगलना शुरू कर दिया। जलियांवाला बाग के हत्याकाण्ड का दृश्य ऊधमसिंह की आंखों के सामने उपस्थित हो गया। उन्होंने बदला लेने का यह ठीक अवसर समझा और अपना रिवाल्वर निकाल कर डायर पर कई वार किए, जिससे वह लड़खड़ा कर गिरा और वहीं दम तोड़

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

गया, उन्होंने लार्ड जेटलैण्ड को भी गोलियों का निशाना बनाया, पर वे बाल-बाल बच गए। सभा में भगदड़ मच गई और पुलिस ने ऊधमसिंह को गिरफ्तार कर लिया। ऊधमसिंह का मस्तक गर्व से आकाश को छू रहा था। आज उन्हें अपने उद्देश्य की पूर्ति में सफलता मिली थी।

डायर की हत्या के तथाकथित षड्यन्त्र की जांच के लिए पंजाब से स्पेशल सी० आई० डी० स्टाफ लन्दन बुलाया गया। लन्दन में रहने वाले भारतीयों पर विशेष निगरानी रखी जाने लगी। क्रान्तिकारी तो ऊधमसिंह के परामर्श से पहले ही लन्दन छोड़ चुके थे। ऊधमसिंह से जब पूछताछ की जाती तो एक ही उत्तर मिलता—'मैं विद्रोही हूं, विद्रोह हर गुलाम का अधिकार है।'

ऊधमसिंह को हाथो में हथकड़ियां और पांवों में बेड़ियां डालकर सेन्ट्रल क्रिमिनल कोर्ट, ओल्ड बेली, लन्दन में जस्टिस एटकिंसन की अदालत में पेश किया गया। 6 जून 1940 को ऊधमसिंह को फांसी की सजा का हुक्म सुनाया गया। 7 जून से ऊधमसिंह ने भूख हड़ताल शुरू की और मांग की कि 'मैं सियासी कैदी हूं, मेरे साथ सियासी कैदियों का सा व्यवहार होना चाहिए।'

42 दिन के पश्चात 19 जुलाई को उनकी यह मांग मान ली गई और उन्होंने भूख हड़ताल समाप्त कर दी। 31 जुलाई 1940 को प्रातः काल पेटन वील जेल में इस महान् क्रान्तिकारी ने 'वन्दे-मातरम्' के राष्ट्रीय गान और 'भारत माता की जय' के नारों के पश्चात हंसते-हंसते फांसी के रेशमी फन्दे को चूम लिया।

फांसी पर चढ़ने से पहले ऊधमसिंह ने अपने कथन में कहा था—'मेरा शरीर मेरे देश की मिट्टी, अन्न और जल से बना है। यह मेरे पास मेरे देश की धरोहर है। मैंने अपने देशवासियों को ब्रिटिश साम्राज्यवाद के नालदार जूतों के नीचे रोंदते देखा है। मैं अपने देश के इस अपमान को कदाचित सहन नहीं कर सकता। मुझे फांसी या मौत का रत्ती भर भी भय नहीं है, क्योंकि मेरी आत्मा अमर है। मैं अपने देश को स्वतन्त्रता के लिए अपना शरीर मातृभूमि के अर्पण कर रहा हूं। मेरा खून भारतवासियों को क्रांति पर उतारू करेगा और ब्रिटिश सामाज्य की कब्र पर आजादी का झण्डा लहराने का कारण बनेगा।

यह खेद का विषय है कि स्वतन्त्रता के 25 वर्ष बीत जाने पर भी शहीद-शिरोमणि ऊधमसिंह की स्मृति के लिए सरकार द्वारा कुछ नहीं किया गया। यही कारण है कि अधिकतर लोग उस शहीद का नाम तक भी नहीं जानते। 27 अप्रैल 1972 को उपविदेश मन्त्री श्री सुरेन्द्र पाल सिंह ने लोकसभा में एक प्रश्न के उत्तर में बताया था कि भारत सरकार ब्रिटिश सरकार से बातचीत करके शहीद ऊधमसिंह के अवशेष, जो कि पेटन वील जेल में सुरक्षित हैं, भारत में लाने का प्रयास कर रही है। भारत सरकार के इस कदम की सर्वत्र सराहना की जायगी। सरकार को चाहिए कि शहीद ऊधमसिंह के अवशेष इंग्लैंड से मंगाकर एक ऐसा बड़ा स्मारक स्थापित करे जो मातृ-भूमि के उस महान् सपूत की शान के शायां हो। उस वीर के प्रति यही सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

सत्य बोध

बच्चे हैं—उगते हुए सूरज
बूढ़े है—डबते हुए दिन।
अगर
बात मानते हो, आओ
हम सब मिलकर,
बिखरे सूरजमुखी—
बीजों को बटोरें,
बोएं
और नए सूरज उगाने की
कोशिश करें।

दूब

ऊपर सूरज
नीचे जलती धरती
उसकी तपन पी रही दूब
खुद जल रहे
उसे शीतल कर रही,
'सत्यं, शिवं, सुन्दरं'
अगर है यही ?
तो आओ
हम सब जिएं
ऐसी जिन्दगी।

—राजबहादुर सिंह

शहादत का जाम लिए खड़ा हूं मैं,
इसे पीने के लिए परवाना नहीं,
नींद आयी है, जब पहरेदारों को,
घर में सामान बचेगा कैसे ?

—भारतेन्द्र

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—पं० श्री दा० सातवलेकर

प्राचीन आर्य ऋषियों की दिव्य दृष्टि

आर्य संस्कृति के सामने हमेशा एक ही उद्देश्य रहा है और वह उद्देश्य है राष्ट्र की एकता। यह उद्देश्य वैदिक काल से लेकर आज तक अनवरत रूप से चला आ रहा है, कभी-कभी विदेशियों के बर्बर आक्रमणों के कारण यह एकता मेघ से आच्छन्न सूर्य के समान आंखों से ओझल अवश्य हो जाती थी, पर सर्वथा लुप्त कभी नहीं हुई। इसी उद्देश्य को सामने रखने के कारण यह आर्यावर्त्त सदियों परतन्त्र रहकर भी जीता जागता रहा।

हमारे वैदिक ऋषि कवि थे, दूरदर्शी थे। इसलिए उन्होंने अपनी दिव्य दृष्टि से यह देख लिया था कि आगे का समय अनेकतावाद से ग्रस्त होने वाला है, इसलिए उन्होंने इस अनेकता में भी एकता का सिद्धान्त स्थापित किया, उन्होने आधिवैदिक क्षेत्र के अग्नि, इन्द्र, वरुण आदि में उसी एक परम पिता की शक्ति देखी। वेद का एक मंत्र कहता है :—

इन्द्र मित्रं वरुणं अग्निं आहु:
अथो दिव्यः स सुपर्णो गरुत्मान।
एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति
अग्निं यमं मातरिश्वान् आहुः॥

'वह परमात्मा एक है, पर ज्ञानी उसे अग्नि, यम, मातरिश्वी इन्द्र, मित्र, वरुण सुपर्ण, गरुत्मान् आदि नामों से पुकारते हैं।' तेजस्वी व ज्ञान स्वरूप होने से वह अग्नि है, ऐश्वर्यवान् होने से इन्द्र है, जगता का नियंता होने से यम है। इसी प्रकार सर्वत्र व्यापक और जगत का पालक होने से वही परमात्मा विष्णु हैं; संहारकारी एवं कल्याण-कारी होने से वही शिव है। इसलिए शिव, विष्णु या किसी भी देव की उपासना उसी एक परमात्मा की उपासना है।

इसी प्रकार समाजगत अनेकता का समावेश समाज पुरुष रूपी एककरित में कर दिया। समाज में ब्राह्मण; क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र भिन्न-भिन्न होते हुए भी समाज पुरुष के अंग हैं, एवं समाज की दृष्टि में एक है। सभी मनुष्य उसी एक परमपिता प्रभु की सन्तानें हैं। वैदिक ऋषि कहता है :—

श्रण्वन्तु सर्वे अमृतस्य पुत्रा :
"हे अमृततमय प्रभु की सन्तानों सुनो" तुम सबकी:
माता भूमि !
माता भूमि है। अतः

अज्यंष्ठासः अकनिष्ठस रन्ते
सं भ्रातरः वावृधु सौभाग्य ॥5516015

'तुम में न कोई बड़ा है और न कोई छोटा है, अतः तुम सब मिलकर सौभाग्य के लिए बढ़ों।' हिन्दू संस्कृति का यह सिद्धान्त है कि विश्व में उसे अनेकता दीख रही है, वह भ्रम है, मिथ्या है, इस अनेकता के पीछे छिपी हुई एकता मात्र सत्य है, यथार्थ है। वेद का सारा सूक्त अनेकता में एकता का दर्शन कराता है। हेंगेल आदि पाश्चात्य दार्शनिकों ने 'अनेकता से एकता' के सिद्धान्त को जिस रूप में संसार के समक्ष रखा, उससे कहीं अधिक प्रभावशाली रूप में हमारे ऋषियों ने इस सिद्धान्त का प्रतिपादन किया।

इस प्रकार वैदिक संस्कृति ने अनेकता में भी सदा एकता को देखा और शांति तथा कल्याण के लिए उसका प्रचार किया है।

(पृष्ठ १४ का शेष)

इसका रंचमात्र भी योगदान नहीं हो पाता। शिक्षा की इस दिशा हीनता तथा निरर्थकता की सब एक स्वर से भर्त्सना करते हैं और उसमें परिवर्तन आवश्यक समझते हैं। परन्तु खेद है कि 28 वर्षों के अनन्तर स्थिति सुधरने के बजाय बदतर ही हुई है। स्तर और उपयोगिता दोनों ह्रास की ओर अग्रसर हैं।

आर्य समाज को यह श्रेय है कि उसने देश के सामने शिक्षा की एक वैकल्पिक पद्धति प्रस्तुत की थी। परन्तु खेद है कि आर्य समाज की ये संस्थाएं भी समय तथा परिस्थितियों से टकरा कर शक्तिहीन हो गई हैं। इतना तेज भी घूमिल हो चुका है। प्रतीत होता है कि ये भी हार मान कर ही न भावना का ग्रास हो गई हैं। जिनकी कभी देश-विदेश में धूम थी, अब अपनी चारदीवारियों में ही जम्हाइयां ले रही हैं। आर्य समाज यदि अपने इस विशाल शिक्षा तंत्र को बदली हुई परिस्थितियों के परिपेक्ष्य में पुर्नगठित करके इसे फिर गतिमान् बना सके तो शिक्षा के क्षेत्र में अपने योगदान की भूमिका को बनाये रख सकता है।

अंधकार को दूर करो, रे !
मत-वादों की छलना हरकर,
पाप ताप का मुख मर्दन कर,
नव जीवन पथ ज्योतित कर
प्राण सुधा छितराओ, रे !

—आभा

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—डा० मुन्शीराम जी शर्मा,

ईश्वर का अस्तित्व

ईश्वर के अस्तित्व पर कई दृष्टियों से विचार किया जा सकता है। मानव शरीर और इसके साथ प्राण, मन, बुद्धि—सब मिलकर एक सुव्यवस्थित मानव-संगठन का निर्माण करते हैं। ऐसे संगठन इस ब्रह्माण्ड में अनेक हैं। निखिल ब्रह्माण्ड स्वतः ऐसा ही एक वृहत् संगठन है। इन्हें हम एक ही तत्व के दो संस्करण कह सकते हैं। एक लघु संस्करण है, तो दूसरा विशाल। दोनों संस्करणों में विचित्र साम्य है। जिस प्रकार लघु संस्करण के निष्पादक अवयव बाहर से अन्दर तक, स्थूल से सूक्ष्म तथा निष्क्रिय से सक्रिय होते गए हैं, उसी प्रकार वृहत् संस्करण के।

मानव संगठन के निर्माण में शरीर के अन्दर की सात धातुएं—रस, रक्त, मांस, मेदा, अस्थि, मज्जा और शुक्र-कारण कार्य पूर्वक परस्पर सम्बद्ध हैं। सत्, रज, तम के भेद से इन सातों के इक्कीस भेद हो जाते हैं। यही भेद इस ब्रह्माण्ड रूपी संगठन में हैं। वैदिक पुरुषसूक्त में इन्हें इक्कीस समिधाएं कहा गया है। शरीर में जैसे नितान्त पार्थिव परमाणुओं का संघात है, वैसे ही ब्रह्माण्ड में पृथिवी आदि लोक हैं। शरीर की भांति ब्रह्माण्ड में प्राण शक्ति संचरित हो रही है। हमारा सूक्ष्म मन ब्रह्माण्ड का सूक्ष्म आकाश है। हमारी बुद्धि ब्रह्माण्ड का द्यौ तत्व है। मानव संगठन के समस्त अवयवों का प्रेरक जीवात्मा है। तो निखिल ब्रह्माण्ड के अवयवों का प्रेरक एक परम आत्म-तत्व होना ही चाहिए।

शरीर के अन्दर सप्त धातुओं की निर्मित नाड़ीचक्र, प्राण-विधान, मन की चंचल गतियां, चित्त का वासना-पुञ्ज, बुद्धि की निर्णायिका शक्ति—सब ऐसे वैचित्र्य के साथ संयुक्त हैं कि बड़े से बड़े दार्शनिक और वैज्ञानिक इनकी ओर दृष्टिपात् करते ही आश्चर्य-चकित हो जाते हैं। ब्रह्माण्ड की रचना भी इससे कम विस्मय विमुग्ध करने वाली नहीं है। दोनों ही स्थानों पर अद्भुत साम्य-शृंखला के दर्शन होते हैं। यही साम्य बाहर से अन्दर तक विद्यमान है। जैसे यहां एक संगठन को देखकर उसके रचयिता का भान होना है, वैसे ही इस ब्रह्माण्ड के संगठन को देखकर रचयिता की रचनाशक्ति में प्रकाशात्मिका बुद्धि निहित रहती है। उसी का विशाल रूप ब्रह्माण्ड रचयिता के अन्दर होना चाहिये।[1]

आधुनिक विज्ञान ने ब्रह्माण्ड के सम्बन्ध में जो अनुसंधान प्रस्तुत किये हैं वे उस परम तत्व की विशाल बुद्धि पर पर्याप्त प्रकाश डालते हैं। सृष्टि-निर्माण की योजना और उसकी कार्य-परिणति पर वैज्ञानिकों ने जो खोज की है, वह निश्चित रूप से इस दिशा की ओर संकेत करती है कि सृष्टि अकस्मात् उत्पन्न नहीं हो गई। इसके पीछे एक महान् मस्तिष्क कार्य कर रहा है। सौर जगत् के सूर्य, चन्द्र, पृथिवी आदि समस्त ग्रह और उपग्रह ऐसे आकर्षण सम्बन्ध में परस्पर बंधे हुये हैं। उनकी दूरी, गति एवं परिमाण ऐसे निश्चित एवं नपे-तुले हैं[2] और एक दूसरे के सहायक बने हुये वे ऐसे सुरक्षित और सुदृढ़ हैं कि उनके इन व्यापारों के पीछे एक अनन्त चेतन सत्ता की विद्यमानता का अनुभव होने लगता है।[3]

फ्रांस के प्रसिद्ध गणितज्ञ लाप्तास (सन् 1796 ई०) ने जब नीहारिकावाद (Nebuler theory) को जन्म दिया तो उसने विश्व की मूल कारण तेजोमय वाष्पराशि की विभिन्न गतियों का सामंजस्य, पश्चिम से पूर्व की ओर प्रयाण, ताप की विकीर्णता से छोटे-छोटे आग्नेय खण्डों का सूर्य, पृथ्वी आदि में परिणमन, सूर्य के पुत्ररूप ग्रह और पौत्ररूप उपग्रहों का निर्माण आदि ऐसे ढंग से उपस्थित किया कि वह विश्व-रचना में एक निर्धारित नियम की ओर स्पष्ट संकेत करने लगा। जब लाप्तास अपने ग्रन्थ को दिखाने के लिए नैपोलियन के पास गया, तो उसने ग्रन्थ को सुनकर पूछा, "लाप्तास ! तुमने सृष्टि का तो वर्णन किया, परन्तु उसके

---

१. The whole frame of nature be speaks an intelligent Author."
'The idea of God', P. 15 by Pringle Pettisson.
"The idea of a universal mind (Logoes) would be a fairly plausible inference from the present state of scientific theory; at least it is in harmony with it."
'The nature of the physical world' P. 338 by Eddington.

२. 'यो अन्तरिक्षे रजसो विमानः' (जिसने अन्तरिक्ष में लोकों को नाप-तोल कर रखा है।) यजु०

३. फिलन्ट ने अपने ग्रन्थ थीइज्म, पृष्ठ १३८ पर इसी प्रकार के विचार प्रकट किए हैं—"Each orb is affecting the other. Each is doing what, if unchecked, would destroy itself and the entire system; but so wonderously is the whole constructed that these seemingly dangerous disturbances are the very means of preventing destenction and securing the universal welfare."

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

रचयिता का नाम भी नहीं लिया।" लाप्लास बोला, "श्रीमान् ! उसके वर्णन की आवश्यकता ही नहीं पड़ी।"

नीहारिकावाद से मिलता-जुलता भारतीय मनीषियों का हिरण्यगर्भवाद है जिसका उल्लेख अथर्ववेद १०-७-२८, मनुस्मृति १-६, श्रीमद्भागवत् २-५ तथा ३-२६ तथा गीता १४-४ के अन्दर है। छान्दोग्य उपनिषद् के छठे अध्याय में उद्दालक ने अपने पुत्र श्वेतकेतु को जो आदेश दिया है, उसमें भी सृष्टि का वही क्रमिक विकास विद्यमान है जो नीहारिकावाद के अन्तर्गत प्रदर्शित किया गया है। अग्नि, जल और अन्न क्रमशः सृष्टि-निर्माण के गैसिक, लिक्विड और सालिड स्तरों को सूचित करते हैं। हमारे यहां लोक भी तीन प्रकार के माने गए हैं, सूर्य, नक्षत्र और पृथिवी। प्रथम प्रकार के लोक प्रकाशमय हैं, द्वितीय प्रकार के तमोमय तथा प्रकाशमय और तृतीय प्रकार के तमोमय जिनमें क्रमशः सत्, रज तथा तम की अधीनता है। ऋग्वेद के अनुसार सत्, रज तथा तम के परमाणु-मिथुन ७२० हैं।[४] जिनकी सत्यता की खोज अभी करनी है। अनुपात की अवस्था में ले आते हैं। प्रकृति में इस प्रकार के अवरोधात्मक किन्तु सन्तुलनात्मक तत्व सार्वभौम रूप से पाये जाते हैं। इनके पीछे कौन महान् चेतन सत्ता काम कर रही है ?

श्री ए० सेठ प्रिंगले पेटीशन अपने ग्रन्थ "The idea of God"[५] के पृष्ठ ६-१० पर लिखते हैं।—"Look round the world; contemplate the whole and every part of it; you will find it to be nothing but one great machine, subdevided into an infinite number of lesser machines, which again admit of subdivisions, to a degree beyond what human senses and faculties can trace and explain. All these various machines, and even their most minute parts, are adjusted to each other with an occuracy, which rovishes into admiration all men, who have ever contemplated them. The curious adopting of means to ends, throughout all nature, resembles exactly the productions of human contriuance, of designs, thought, wisdom and intelligence. Since therefore, the effects resemble each other, we are led to infer that the causes also resemble."

"विश्व के समग्र रूप को एक साथ लेकर अथवा उसके किसी एक अंश पर ध्यान पूर्वक विचार कीजिये तो वह एक वृहत यंत्र प्रतीत होता है जिसके अन्दर अपरिमित छोटे-छोटे यंत्र हैं। इन छोटे-छोटे यंत्रों के अन्दर पुनः अनेक लघुतर एवं लघुतम यंत्र विद्यमान हैं जो मानव खोज शक्ति तथा व्याख्या शक्ति की सीमा में आबद्ध नहीं हो सके। ये विभिन्न यंत्र अपने समस्त अंशों के साथ ऐसे घनिष्ठ रूप में सहयुक्त हैं कि सभी विचारशील मानव उसकी प्रशंसा करते हैं। प्राकृतिक जगत् में साधन और साध्य का सम्बन्ध सर्वत्र वैसा ही है जैसा मानवी बुद्धि की कृतियों में दृष्टिगोचर होता है, अथवा यह कहना युक्ति संगत

ईश्वर है या नहीं, है तो उसकी सिद्धि में क्या प्रमाण ? इसी गहरे गूढ़ प्रश्न का उत्तर प्रस्तुत लेख की पंक्तियों में विद्वान् लेखक ने दिया है। पाठक गहराई में पैठ कर कुछ अवश्य पाएंगे।

—संपादक

सृष्टि के अटल नियम के अनुसार पृथिवी का अपने कक्ष पर और सूर्य के चारों ओर निश्चित कक्ष में भ्रमण सूर्य का तापमान आदि ऐसे तथ्य हैं जो सृष्टि में पाये जाने वाले एक व्यवस्थित और निश्चित विधान को स्वीकार करते हैं। इस विधान का विधाता कौन है ? विश्व में सहस्रों वस्तुएं हैं, उनमें से एक भी वस्तु आवश्यकता से अधिक नहीं हो पाती। प्रत्येक वस्तु को अपनी स्थिति के लिए किसी न किसी अन्य वस्तु पर अवलम्बित होना पड़ता है। Kenneth walker ने अपने ग्रन्थ 'Meaning and purpose' के पृष्ठ १०० पर इसी विचार को प्रकट किया है :—

"That every thing in the universe is integrated with every other part of it, is now becoming obcious to scientists."

यदि कोई वस्तु आवश्यकता से अधिक मात्रा में फैल जाती है, तो वहीं उसके विनाशक कीटाणु काम करने लगते हैं और उसकी अधिक मात्रा को उदरस्थ करके उसे

४. द्वादशारं न हि तज्जराय वर्वर्त्ति चक्रम परिद्यामृतस्य। आ पुत्रा अग्ने मिथुनासो अत्र सप्त शतानिविंशतिश्च ॥
ऋ १-१६४-११

5. Oxford University Press, Newyork, Second Edition.

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

होगा कि वह उससे कहीं अधिक बढ़कर है। जब कार्यों में समता है, तो कारणों में भी समता होनी ही चाहिये। अतः मानव मस्तिष्क की ही भांति प्रकृति के महान् कार्य जगत् का रचयिता एक ऐसा महान् मस्तिष्क होना चाहिये जिसमें महत् कार्य की अपेक्षा से महत् शक्तियां भी विद्यमान हों।"

इस कथन की वास्तविकता विज्ञान के सभी क्षेत्रों की खोजों से सिद्ध हो रही है। शरीर का अध्येता जब चक्षु-निर्माण पर दृष्टि डालता है, उसके विभिन्न अवयवों के संगठन पर विचार करता है, तो उसे निस्सन्देह एक अपूर्व रचयिता का भान होने लगता है। जैसे विश्व एक यंत्र के समान है वैसे ही शरीर भी; जिसके समस्त अंग सहयोग की क्रिया द्वारा परस्पर सम्बद्ध हैं। मानव ने समाज शास्त्र का आधार शरीर-विज्ञान से ही ग्रहण किया है।

जीव विज्ञान की दृष्टि से सोचे तो जीवन स्वयं एक महान् मस्तिष्क या व्यापक बुद्धि का परिचय दे रहा है। जीवन की थाह अभी तक किसी को नहीं मिली। इसकी नाप-तौल, लम्बाई-चौड़ाई आदि कुछ भी नहीं, फिर भी इसमें बहुत ही शक्ति विद्यमान है। एक फूटता हुआ अंकुर पहाड़ को भी विदीर्ण करता हुआ बाहर आ जाता है। प्रकृति की समस्त उदात्त शक्तियों पर जीवन विजयी बना हुआ है। इस जीवन का भी एक मूल महाजीवन होना चाहिये। इस प्रकार जगत् और जीवन दोनों ही एक सर्वव्यापक, चेतन बुद्धितत्व की सत्ता सिद्ध करते हैं।

प्लेटो का कथन है—"समस्त सीमित सत्ताओं,कारणों, नियमों, विचारों और सिद्धान्तों से परे एक बुद्धि-तत्व है, जो समस्त सिद्धान्तों का मूल सिद्धान्त, समस्त विचारों का स्रोत, सृष्टि का विधाता और शासक, समस्त अस्तित्वों का सार और कारण तथा विश्वव्यापी क्रमसामंजस्य, सौन्दर्य, उत्तमता एवं भद्रता का एकमात्र उद्भव स्थान है और जिसे उसके प्रभुत्व तथा महत्व के कारण सबका स्वामी कहा जाता है।[६]

इसी सर्वोपरि चेतन तत्व को ईश्वर कहते हैं। दार्शनिकों ने इस अन्तिम तत्व के सम्बन्ध में भिन्न-भिन्न प्रकार के विचार प्रकट किये हैं। भारत वर्ष में व्यास तथा पतंजलि ऋषि ने निरावरण शब्दों में ईश्वर की सत्ता स्वीकार की है। उत्तरमीमांसा अथवा ब्रह्मसूत्र का प्रारंभ ही ब्रह्म जिज्ञासा, से हुआ है। व्यास ब्रह्म को संसार के जन्म, स्थिति संहार का कारण मानते हैं[७] पंतजलि ईश्वर को क्लेश, कर्म-विपाक और आशय से असंपृक्त पुरुष-विशेष कहते हैं। गौतम ने न्याय दर्शन में ईश्वर को समस्त प्रपंच के आदि कारण तथा कर्म-फलप्रदाता के रूप में स्वीकार किया है। सांख्य-दर्शन का विषय ईश्वर के अस्तित्व का प्रतिपादन करना नहीं था। अतः कपिल पर जो अनीश्वरवादी होने का आरोप लगाया जाता है, वह निरर्थक है। कपिल ने सांख्य दर्शन ५-४७ में वेदों का अपौरुषेयत्व तथा ६-३४ और ५-५१ में वेदों का स्वतः प्रामाण्य स्वीकार किया है। वेद की प्रामाणिकता को इतने प्रबल शब्दों में स्वीकार करने वाला ऋषि, निरीश्वर-वादी नहीं हो सकता।

आचारशास्त्र में स्पष्ट रूप से ईश्वर की सत्ता स्वीकार की गई है। प्लेटो और काण्ट दो पाश्चात्य दार्शनिक भलाई और बुराई तथा शाश्वत जीवन के मूल में ईश्वर के अस्तित्व को देखते हैं। आचारशास्त्र हमें सत् की ओर प्रवृत्त करता है और पूर्ण पवित्रता की ओर ले जाना चाहता है। जीवन का यह आदर्श ईश्वर में ही घटित हो सकता है। काण्ट के शब्दों में ईश्वर प्रमुख रूप से और अनिवार्यतः सदाचार के नियामक जनक और विधाता हैं। विश्व की सदाचार-व्यवस्था उसके दर्शन की अन्तिम वाणी कही जा सकती है।[८]

बीमार है पूरा जहाँ

—गोकरन सिंह दिनकर

पथरायी आँखों में—
जिन्दगी के स्वप्न कहाँ ?
वक्त ने हमको पुकारा
तोड़ दें पाखण्ड के
बंधन सभी।
ये भरत भूमि—
वेदालोक से,
जगमगायेगी तभी।
बढ़ चलो विश्वास की
पतवार ले हे आर्य वीरो
अब भँवर से डर कहाँ ?
नयी आशायें, नया उत्साह ले,
नव युग बसायेंगे।
सुप्त पीढ़ी के लिये,
नव जागरण के गीत गायेंगे।
क्या देखते रह जायेंगे—
अपने घरों में हम,
निराशा से बीमार हैं पूरा जहाँ ?

6. "Christianity and Greek Philosophy" में Cocker द्वारा उद्धृत।
७. 'जन्माद्यस्य यतः'
8. Franz Werfel द्वारा "Between Heaven and Earth" के पृष्ठ १२२ पर उद्धृत।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आर्यसमाज स्थापना शताब्दी वर्ष का सन्देश

शुभ आर्यसमाज शताब्दी वर्ष अब हमें जगाने को आया।
ईश्वर की वाणी वेद ज्ञान से विश्व शान्ति करने आया॥
नित नूतन नव उत्साह लिये सद्ज्ञान भाव भरने आया।
इस धराधाम के मानव को मानवता सिखलाने आया॥

जो द्वेष, कपट, छल, स्वार्थ विश्व में, उसे मिटाने को आया।
गुमराह हुए विश्व के मानव को सतपथ बतलाने आया॥
जो मत और पंथ में बंटे हुए हैं उन्हें एक करने आया।
सब मानव का है धर्म एक, इस तथ्य को समझाने आया॥

सब छुआछूत और ऊंच-नीच का भेद मिटाने को आया।
सब जात-पाँत वो विषमताओं को यह समाप्त करने आया॥
सब दलित वर्ग व नारीदल को पुनः स्वत्व देने आया।
सबका अधिकार समान बात कर्तव्य बड़ा है बतलाया॥

सदियों से जिसको भूले हुए थे, याद दिलाने को आया।
रख विश्व प्रेम अपने मन में अब गले-गले मिलने आया॥
बढ़ रही कुरीति, मनुज मात्र में उसे मिटाने को आया।
जिससे मानव अब दुःखी हुए निर्मूल उसे करने आया॥

अब विश्व बन्धुत्व स्थापन में सन्देश नया सबको लाया।
जिससे सबका कल्याण रहे उस वेद मार्ग को बतलाया॥
जिससे यह धरती स्वर्ग बने वह अभिलाषा लेकर आया।
मानव-मानव के मध्य प्रेम का मंत्र सभी को बतलाया॥

ऋषि दयानन्द ने आकर मानव को मानव बनना सिखलाया।
एक ईश उपासक रहें सभी सब भेदभाव को सुलझाया॥
इस आर्यसमाज शताब्दी का स्वागत हम मिलकर करें सभी।
जो ध्रुव-सत्य हो जीवन में उसका नित पालन करें सभी॥

—ध्रुव नारायण प्र० आर्य,

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

१ :

—आचार्य रत्नसिंह

आर्यसमाज का आधार :

(प्रथम नियम)

भारत के महान् विचारक और दार्शनिक आचार्य रत्नसिंह का प्रवक्ताओं में सर्वोच्च स्थान है। आपने प्रभावपूर्ण ढंग से आर्यसमाज के नियमों की व्याख्या "जन-ज्ञान" साप्ताहिक के लिए लिखनी स्वीकार की है। विश्वास है उलझे प्रश्न लेख पढ़कर सुलझेंगे —संपादक

सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं उन सबका आदि मूल परमेश्वर है।

इस नियम के तीन भाग हैं।

१. सब सत्य विद्या २. विद्या (सत्य विद्या) से जो पदार्थ जाने जाते हैं। ३. परमेश्वर उन सबका अर्थात् सत्य विद्या और उससे जिन पदार्थों का बोध होता है आदि मूल है।

यहां सत्य बिना, पदार्थ तथा आदि मूल पदों के अर्थ विचारणीय हैं। अतः ये दसों नियम महर्षि दयानन्द जी द्वारा रचित हैं, अतः उक्त पदों का वही अर्थ ग्राह्य है जो कि उन्होंने अपने ग्रन्थों में किया है।

सर्व प्रथम 'विद्या' शब्द के अर्थ पर विचार किया जाता है। इस शब्द के अर्थ ये हैं—

"जिससे ईश्वर से लेके पृथिवी पर्यन्त पदार्थों का सत्य विज्ञान होकर, उनसे यथा योग्य उपकार लेना होता है, इसका नाम 'विद्या' है।" (आर्योद्देश्यरत्नमाला सं० १६)

"जिससे पदार्थ यथावत् जानकर न्याय युक्त कर्म किये जावें वह 'विद्या' और जिससे किसी पदार्थ का यथावत् ज्ञान न होकर अन्याय रूप कर्म किये जायें वह 'अविद्या' कहाती है।" (व्यवहार भानुः)

"जिससे पदार्थों का यथार्थ स्वरूप बोध होवे वह विद्या कहाती है।"

(सत्यार्थ प्रकाश-समु० ९) इन उद्धरणों का सार यही है कि 'विद्या' वह है जिससे संसार के समस्त पदार्थों, चेतन व अचेतन दोनों का यथार्थ ज्ञान प्राप्त होता है। प्रायः लोक में विद्या का प्रयोग भिन्न अर्थ में भी किया जाता है। जेब काटने व धोखा देने की कला को भी विद्या कहा जाता है। जादू, टोना व दूसरों को ठगना भी 'विद्या' है। क्या परमेश्वर इस प्रकार की विद्याओं का भी आदि मूल है? यदि उक्त नियम में केवल विद्या शब्द का ही प्रयोग किया जाता तो कुछ व्यक्ति इस प्रकार की शंका कर सकते थे यद्यपि यह शंका बहुत उथली है। महर्षि दयानन्द जी ने विद्या शब्द से पूर्व सत्य विशेषण रखकर इस प्रकार की शंका के लिए कोई गुंजाइश नहीं छोड़ी। वैसे यदि गहन दृष्टि से देखा जाये तो महर्षि की दृष्टि में 'विद्या' और 'सत्य विद्या' में कोई अन्तर नहीं है। किन्तु फिर भी नियम के भाव को अधिक स्पष्ट करने के लिए यहां 'सत्य विद्या' पद का प्रयोग किया गया है।

अब प्रश्न यह उपस्थित होता है कि सत्य विद्या किसे कहते हैं? सत्य विद्या उसे कहते हैं जो तीन काल में एक रस रहती है, जिसका विकास या ह्रास अर्थात् उन्नति या अधोगति नहीं होती। यह अपरिवर्तन शील, नित्य व शाश्वत होती है जैसे दो और दो का योग सदैव चार होता है। किसी भी काल में इसके योग में ह्रास व वृद्धि सम्भव नहीं। इस दृष्टि से मनुष्य के ज्ञान को सत्य विद्या की संज्ञा नहीं दी जा सकती, क्योंकि उसका ज्ञान परिवर्तन शील है, उसमें उन्नति व अधोगति होती रहती है। अतः स्पष्ट है कि ईश्वरीय ज्ञान को ही सत्य विद्या कहा जा सकता है और उसी ज्ञान को वेद नाम से पुकारा जाता है। इस धारणा की पुष्टि तृतीय नियम से होती है। वहां लिखा है कि "वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है।" इस प्रकार प्रस्तुत नियम में प्रयुक्त 'सत्य विद्या' पद का अर्थ हुआ 'वेद'। सत्य विद्या से पूर्व विशेषण रूप में सब पद रक्खा हुआ है। अतः 'सब सत्य विद्या' पद का अभिप्राय हुआ 'सब वेद' अर्थात् चारों वेद।

नियम का दूसरा भाग इस प्रकार है—"जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं।" इसका अर्थ यह हुआ कि 'वेद से जिन जिन पदार्थों का ज्ञान होता है। वेद का प्रतिपाद्य विषय क्या है, इसकी व्याख्या तृतीय नियम में की जायेगी। यहां पदार्थ पद का अर्थ विचारणीय है। तर्क-कौमुदी के अनुसार 'अभिधेयाः पदार्थाः' अर्थात् शब्द द्वारा व्यक्त किसी भी वस्तु को पदार्थ कहते हैं। इस अर्थ में संसार की सभी ज्ञेय वस्तुओं को पदार्थ कह सकते हैं। पदार्थों का वर्गीकरण करते हुए वैशेषिक दर्शन में छः पदार्थ माने गये हैं जिनके नाम ये हैं—द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष और समवाय। बाद में चलकर अभाव को भी सातवां पदार्थ मान लिया गया है। द्रव्य के ९ भेद हैं जो इस प्रकार हैं—पृथिवी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, काल दिग, आत्मा (जीवात्मा व परमात्मा) तथा मन। सत्यार्थ प्रकाश अष्टमसमुल्लास में महर्षि दयानन्द जी ने परमेश्वर व जीव के साथ ही काल और आकाश को भी अनादि माना है। अनादि पदार्थ कार्य रूप में परिणत न होने के कारण अपने निमित्त कारण की अपेक्षा नहीं रखते। यदि प्रस्तुत नियम में पदार्थ पद का प्रयोग उक्त अर्थ में किया जाये तो यह मानना पड़ेगा कि ईश्वर अपना स्वयं का तथा जीवात्मा, काल व आकाश का निमित्त

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कारण है अर्थात् वह इन सबको उत्पन्न करता है। किन्तु यह आशय महर्षि के सिद्धान्त के विरुद्ध है। अतः पदार्थ पद का अर्थ यहां पर कार्य जगत् करना ही समीचीन है क्योंकि किसी शब्द का अर्थ प्रकरण और लेखक के आशय को लेकर किया जाता है।

नियम के तीसरे भाग में कहा गया है कि उन सबका अर्थात् वेद और कार्य जगत् का परमेश्वर आदि मूल है। आदि का अर्थ है—जिसके पूर्व और परे कुछ न हो। मूल का अर्थ है कारण। सत्यार्थ प्रकाश अष्टम समुल्लास में सांख्य दर्शन के "मूले मूलाभावाद मूलं मूलम्" सूत्र के अर्थ में महर्षि ने लिखा है कि 'मूल का मूल' अर्थात् कारण का कारण नहीं होता।' इस अर्थ के आधार पर आदि मूल का अर्थ हुआ आदि कारण। सत्यार्थ प्रकाश के इस प्रकरण में आदि कारण का अर्थ प्रकृति किया गया है। इस आधार पर कुछ विद्वान् बिना गम्भीरता से विचार किए प्रस्तुत नियम में प्रयुक्त आदि मूल शब्द का अर्थ प्रकृति लेकर इस नियम का यह अर्थ करने का प्रयत्न करते हैं कि परमेश्वर इस जगत् का उपादान कारण है क्योंकि आदि मूल का अर्थ है प्रकृति और प्रकृतिहै जगत् का उपादान कारण। उनकी दृष्टि में आदि मूल का अर्थ उपादान कारण है। परन्तु यह व्याख्या सर्वथा अनुचित है और महर्षि के मन्तव्य के सर्वथा विरुद्ध। सत्यार्थप्रकाश अष्टम समुल्लास में महर्षि ने प्रश्नोत्तर रूप इस विषय का विवेचन इस प्रकार किया है—(प्रश्न) जगत् के कारण कितने होते हैं?

(उत्तर) तीन, एक निमित्त, दूसरा उपादान, तीसरा साधारण। निमित्त कारण उसको कहते हैं कि जिसके बनने से कुछ बने, न बनाने से न बने। आप स्वयं बने नहीं, दूसरे को प्रकारान्तर बना देवे। दूसरा उपादान कारण उसको कहते हैं जिसके बिना कुछ न बने वही अवस्थान्तर रूप होके बने और बिगड़े भी। तीसरा साधारण कारण उसको कहते हैं कि जो बनाने में साधन और साधारण निमित्त हो। निमित्त कारण दो प्रकार के हैं। एक सब सृष्टि को कारण से बनाने धारने और प्रलय करने तथा सबकी व्यवस्था रखने वाला मुख्य निमित्त कारण परमात्मा। दूसरा परमेश्वर की सृष्टि में से पदार्थों को लेकर अनेक विध कार्यान्तर बनाने वाला साधारण जीव। उपादान कारण, प्रकृति परमाणु जिसको सब संसार के बनाने की सामग्री कहते हैं।

इस उदाहरण से स्पष्ट है कि महर्षि के मन्तव्यानुसार ईश्वर जगत् का निमित्त कारण है, उपादान कारण नहीं। नवीन वेदान्ती लोग मकड़ी का उदाहरण देकर ब्रह्म को जगत् का उपादान कारण सिद्ध करते हैं। उनका विचार है कि जिस प्रकार बिना किसी बाह्य सामग्री की सहायता लिए अपने भीतर से तन्तु निकालकर मकड़ी जाला बना लेती है उसी प्रकार ब्रह्म अपने में से जगत् को बना आप जगदाकार हो जाता है। इस मत के खण्डन में महर्षि का कथन है कि "जो तुम्हारे कहने के अनुसार जगत् का उपादान कारण ब्रह्म होवे तो वह परिणामी अवस्थान्तर युक्त विकारी हो जावे। और उपादान कारण के गुण कर्म स्वभाव कार्य में भी आते हैं।" ब्रह्म चेतन है इसलिए पृथिव्यादि कार्य भी चेतन होना चाहिए। किन्तु ऐसा देखने में नहीं आता। इसका कारण यही है कि ईश्वर जगत् का केवल निमित्त कारण है; उपादान कारण नहीं इस आधार पर प्रस्तुत नियम में आदि मूल का अर्थ निमित्त कारण ही हुआ। अतः इस नियम का भाव इस प्रकार हुआ—वेद और कार्य्य जगत् का निमित्त कारण परमेश्वर है। बीज रूप में इस नियम से आर्य्यसमाज के दो मौलिक सिद्धान्तों की जानकारी मिलती है। (१) वेद अपौरुषेय हैं (२) परमेश्वर जगत् का निमित्त कारण है। इसमें यह भी अन्तर्निहित है कि यह जगत् सत्य है, मिथ्या नहीं और नवीन वेदान्तियों का ब्रह्मवाद का सिद्धान्त असत्य है। इसके साथ ही इस नियम में भौतिकवाद के इस मत का भी खण्डन हो जाता है कि जगत् बिना किसी चेतना सत्ता की सहायता के प्रकृति से स्वयं उत्पन्न हो जाता है। इन तीनों सिद्धान्तों का विवेचन करना यहां सम्भव न हो सकेगा, तथापि प्रथम सिद्धान्त कि वेद अपौरुषेय हैं, संक्षेपतः वर्णन करना आवश्यक एवं उपयुक्त प्रतीत होता है।

वेद ही ईश्वरीय ज्ञान है

आर्य्यसमाज की मान्यता है कि वेद ईश्वर द्वारा प्रदत्त सर्व प्रथम वह ज्ञान है जो मनुष्यों को सृष्टि उत्पत्ति के साथ दिया था। यह मान्यता केवल शब्द प्रमाण पर ही आधारित नहीं हैं, वरन् तर्क-संगत भी है। वेद की अपौरुषेयता पर विचार करते समय हमारे सामने एक प्रश्न उपस्थित होता है, जिस पर विचार करना आवश्यक है। वह यह है कि विभिन्न मतावलम्बी सभी लोग अपने-अपने धर्म ग्रन्थों को ईश्वरीय ज्ञान मानते हैं। ऐसी अवस्था में किसको ईश्वरीय ज्ञान माना जाये और किसको नहीं? इसके उत्तर में हम यही कह सकते हैं कि सब मतों के दावों की कसौटी पर कसकर देख लो जो उस पर खरा उतर जाये वही ईश्वरीय ज्ञान हो सकता है। यहां कतिपय कसौटियां प्रस्तुत की जाती हैं—

१. **ईश्वरीय ज्ञान मानव सृष्टि के साथ ही सृष्टि के आरम्भ में मिलना चाहिए।**
२. **ईश्वरीय ज्ञान किसी देश विशेष की भाषा में न हो।**
३. **ईश्वरीय ज्ञान के ग्रन्थ में किसी देश का भूगोल व इतिहास नहीं होना चाहिए।**
४. **उसमें कोई भी बात सृष्टि क्रम के विपरीत न हो।**

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

५. वह ज्ञान ईश्वर के गुण, कर्म और स्वभाव के अनुकूल होना चाहिए।

६. मानव के पूर्ण कल्याण के लिए जितना ज्ञान अपेक्षित है, वह उस ग्रन्थ में होना चाहिए।

कहने की आवश्यकता नहीं कि इन कसौटियों पर केवल वेद ही खरा उतरता है। वेद का प्रकाश ईश्वर ने सृष्टि के आरम्भ में अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरा नामक चार ऋषियों के हृदय में किया था। आर्यसमाज का दावा है कि वेद में न इतिहास है और न उसमें कोई सृष्टि क्रम के विरुद्ध बात है। वेद के ईश्वरीय ज्ञान होने के सम्बन्ध में कई शंकाएं प्रस्तुत की जाती हैं। उन सबका महर्षि दयानन्द जी ने सत्यार्थ प्रकाश सप्तम समुल्लास और ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका के वेदोत्पत्ति विषय अध्याय में विस्तार के साथ तर्क संगत समाधान किया है।

इस नियम की एक दूसरी व्याख्या

कुछ विद्वानों ने इस नियम की एक भिन्न व्याख्या की है उस पर भी विचार कर लेना चाहिए। उनके विचार में अन्वय करने के उपरान्त इस नियम का रूप यह होगा—"जो सब सत्य विद्या और पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं, उन सबका आदि मूल परमेश्वर है।"

जो सब का अर्थ है—ईश्वर, जीव व प्रकृति। ये तीनों अनादि व अनन्त हैं।

सत्य विद्या कहते हैं ब्रह्म विद्या को। इसी को परा विद्या कहते हैं।

पदार्थ विद्या का अर्थ है सृष्टि विद्या सम्बन्धी विद्या। यही भौतिक विज्ञान है। इसी को अपरा विद्या कहते हैं।

इस प्रकार इस नियम का यह अर्थ हुआ कि ब्रह्म, विद्या और सृष्टि विद्या से ईश्वर जीव व प्रकृति को जाना जाता है और ईश्वर इन सबका निमित्त कारण है।

यह अर्थ दोष पूर्ण है। इसमें कई आपत्तियां हैं। प्रथम आपत्ति तो यह है कि ईश्वर अपना स्वयं का तथा जीव व प्रकृति का निमित्त कारण नहीं है। द्वितीय आपत्ति यह है कि तीसरे विषय में आता है कि 'वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक हैं। यदि सत्य विद्या का अर्थ ब्रह्म विद्या है तो क्या वेद में पदार्थ विद्या नहीं है? तीसरे नियम में सत्य विद्या नहीं बल्कि सत्य विद्याओं लिखा है। इस अवस्था में सत्य विद्या का अर्थ केवल ब्रह्म विद्या कैसे किया जायेगा? अतः इस नियम का जो अर्थ हमने पहिले किया है वही ठीक है।

जैसा कि हम भूमिका में लिख चुके हैं कि आर्य समाज के दश नियमों का आधार वेद हैं, यहां प्रमाण रूप में इस नियम के आधार वेद मन्त्र उद्धृत किये जाते हैं—

(१) ऋतञ्च सत्यञ्चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत।

अर्थ—ऋतं यथार्थ सर्व विद्याधिकरणं वेद स्त्रंशा (यथार्थ सब विद्या का खजाना वेद शास्त्र)

सत्यं—त्रिगुणात्मक प्रकृति जिसका नाम अव्यक्ता सत् प्रधान है जो स्थूल व सूक्ष्म जगत् का कारण है (अर्थात् प्रकृति) वह भी (अध्यजायत) कार्य रूप में प्रकट हुई। भावार्थ यह है कि ईश्वर ने वेद की रचना की और कार्य जगत् को प्रकृति से उत्पन्न किया।

() तस्माद्यात्सर्वहुत ऋचः सामानि जज्ञिरे। छदांसि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत॥

यजु० अ० ३१। मं० ७॥

अर्थ—उस पर ब्रह्म से (ऋचः) ऋग्वेद (यजुः) यजुर्वेद (सामानि) सामवेद और (छन्दांसि) अथर्ववेद ये चारों वेद उत्पन्न हुए हैं।

(३) यस्मादृचो अपातक्षत् यजुर्यस्माद पाकषन्। सामानि यस्य लोमाण्यथर्वा ङ्गिरसो मुखम्। स्कम्भं तं ब्रूहि कतमः स्विदेव सः

अथर्व० कां० १०। प्रपा० २३। अनु० ४। सू० ७ मं० २०

अर्थ—जो सर्व शक्तिमान् परमेश्वर है उसी से ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद अथर्ववेद ये चारों उत्पन्न हुए हैं।

(४) हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्।

स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम॥ यजु० १३।४॥

अर्थ—जो (हिरण्यगर्भः) स्वप्रकाशस्वरूप और जिसने प्रकाश करनेहारे सूर्य चन्द्रमादि पदार्थ उत्पन्न करके धारण किये हैं जो (भूतस्य) उत्पन्न हुए सम्पूर्ण जगत् का (जातः) प्रसिद्ध (पतिः) स्वामी (एकः) एक ही चेतन-स्वरूप (आसीत्) था जो (अग्रे) सब जगत् के उत्पन्न होने से पूर्व (समवर्तत) वर्तमान था (सः) सो (इमाम) इस (पृथिवीम्) भूमि (उत) और (द्याम) सूर्यादि को (दाधार) धारण कर रहा है हम लोग उस (कस्मै) सुखस्वरूप (देवाय) शुद्ध परमात्मा के लिए (हविषा) ग्रहण करने योग्य योगाभ्यास और अतिप्रेम से (विधेम) विशेष भक्ति किया करें॥

इस नियम से यह तो सर्वथा स्पष्ट ही है कि आर्य्य समाज एक ईश्वर विश्वासी समाज है। स्वभावतः प्रश्न होता है कि वह ईश्वर कौन है? उसका क्या स्वरूप है? इसका उत्तर अगले नियम में दिया गया है।

अगले अंक में दूसरे नियम की व्याख्या पढ़िए।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

१९७६ के लिए आकर्षक डायरी

वैदिक—दैनन्दिनी (डायरी)

[दूसरा संस्करण]

नयी साज सज्जा
और
अनेकों आकर्षण युक्त

पहले से दुगने पृष्ठ

२४ रंगीन चित्र
साइज पहले जितना
पर
एक पृष्ठ पर एक तिथि

मूल्य

अजिल्द ५) =३०० रु० सैंकड़ा
सजिल्द ६) =४०० रु० सैंकड़ा

१९७६ का आकर्षक कैलेंडर

(तीसरा संस्करण)

६ रंगों में छपा बड़े साइज का कैलेंडर
तैयार है : ५० रु० सैंकड़ा

● ● ●

अपना आदेश तुरन्त भेजें

दयानन्द संस्थान
नई दिल्ली-११०००५

प्रचार के लिए ट्रैक्ट

केवल १०० रु० हजार

१. आर्यसमाज क्या मानता है ? श्री मदनमोहन विद्यासागर
२. महर्षि दयानन्द की विशेषताएं : महात्मा नारायण स्वामी
३. आर्यसमाज की मान्यताएं : पं० रामचन्द्र देहलवी
४. विश्व को वेद का सन्देश—भारतेन्द्रनाथ
५. आर्य समाज के दस नियम (व्याख्या सहित)
६. निगंत्रण आर्यसमाज का : स्व० पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय
७. आर्यसमाज के १०० वर्ष : पं० भारतेन्द्रनाथ

(आर्यसमाज ने १०० वर्ष के कालखण्ड में विभिन्न क्षेत्रों में क्या योगदान दिया है, इसका प्रेरक विवरण पढ़िए इस ट्रैक्ट में जो अब तक लाखों की संख्या में छप चुका है।)

८. सुख का मार्ग : पं० भारतेन्द्रनाथ
९. आर्य कौन ? पं० हरिशरण सिद्धान्तालंकार
१०. स्वास्थ्य का महान शत्रु अण्डा : स्वामी जगदीश्वर नन्द सरस्वती
११. साम्यवाद—समाजवाद क्यों नहीं ? महात्मा नारायण स्वामी
१२. स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश
१३. मूर्ति पूजा से हानियां
१४. आर्योद्देश्य रत्नमाला—महर्षि दयानन्द
१५. वैदिक संध्या

ये सभी टैक्ट १०० रु० हजार। १५ रु० सैंकड़ा दिए जाएंगे। कोई भी ट्रैक्ट १००० से कम हजार के रेट में नहीं भेजेंगे।

● ● ●

दयानन्द संस्थान, नई दिल्ली-५

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आर्यसमाज के उपदेशक, संन्यासी, भजनोपदेशक, पुरोहित, विद्वान्, लेखक, कवि, पत्रकार, कार्यकर्ता, समाजों व सभाओं के अधिकारी कार्यकर्ता कृपया यह फार्म भरकर शीघ्र से शीघ्र भेजें। साथ में अपना पासपोर्ट साइज का चित्र चिकने कागज पर भेजें। —सम्पादक

आर्यसमाज के आधार स्तंभ

नामक ग्रंथ छप रहा है।

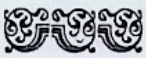

★

पता : दयानन्द संस्थान
१५९७, हरध्यानसिंह रोड
नई दिल्ली-११०००५

यह विवरण शीघ्र भेजें

विवरण पत्र

१. नाम
२. पिता का नाम
३. माता का नाम
४. जन्मतिथि
५. जन्म स्थान
६. आरंभिक शिक्षा
७. शिक्षा का पूर्ण विवरण
८. आर्यसमाज में कार्य करने की प्रेरणा कैसे मिली !
९. क्या क्या प्रमुख कार्य किया ?
१०. किन-किन पदों पर रहे ?
११. ग्रन्थों/कार्यों/पद आदि का प्रमुख परिचय
१२. आर्यसमाज आप को क्यों पसन्द है ?
१३. विशेष ज्ञातव्य

यह विशाल ग्रंथ शीघ्र
छप रहा है। मूल्य होगा ३१ रु०

किन्तु अभी १५ मार्च तक
केवल २२ रु०

संलग्न ववरण लिखकर
आज ही भेजिए।

●

अधिक से अधिक
व्यक्तियों तक यह
संदेश पहुंचाएं

●

शीघ्र ही चित्र-विवरण और आदेश भेजें

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—बनारसी सिंह

तीन वैदिक राष्ट्र मंत्र

यस्याश्चतसः प्रदिशः पृथिव्या
यस्यामन्नकृष्टयः सम्बभूवः ।
या विभर्ति बहुधा प्राणदेजत्
सा नो भूमिगस्विपन्ते दधन्तु ।।
दो नो द्वेषेत प्रथिवि यः
योऽमिदासान मनसा यो वधेन ।
तं नो भूमि रन्धय पूर्व कृत्वारि ।।
उपरव्यास्ते अनभीकी अयक्षमा
अस्मभ्यं सन्तु पृथिवि प्रसूताः ।
दोर्घ न आयुः प्रतिबुध्यकाना
वदं तुम्यं बलिहतः स्याम ।।

वह मातृभि है जिसकी चार दिशाएं,
हरे भरे हैं खेत जहां लहराएं ।
अनेक प्रकार करते हैं जो प्राणी रक्षा,
गौओं व अन्नों से हमें दे सफलता ।।
हे शत्रु मर्दिनी ! उन्हें विनष्ट कर दें,
जो भी जन द्वेष करते हैं हमसे ।
जो ससैन्य चढ़े आते हैं सीमा पर,
जो हैं सदा हमारे अहित को तत्पर,
हे मातृभूमि ! तेरे प्रदेश हों सभी
रोगरहित भय से व क्षय से
सजग रहें हम सदैव व व कटिवद्ध
रक्षा को तेरी हृदय से ।।

(अथर्ववेद)
१२वें काण्ड के (प्रथम पृथिवी) सूक्त से

मंगल - कामनाएं

आदरणीय पं० भारतेन्द्रनाथ जी,

यह जानकर कि आप जन-ज्ञान को साप्ताहिक भी प्रकाशित करना आरम्भ कर रहे हैं मुझे बहुत प्रसन्नता हुई। आर्यसमाज स्थापना शताब्दी समारोह के इस पुण्य वर्ष में यह एक अत्यन्त उपयुक्त पग है। वैदिक धर्म की सर्वश्रेष्ठ मान्यताओं को लेखों द्वारा जनता तक ले जाना एक महान् कार्य है। यही अमर शहीद पं० लेखराम जी की अन्तिम वसीयत थी। देश को एक नहीं अनेकों भिन्न-भिन्न प्रकार के साप्ताहिक पत्रों की महती आवश्यकता है। विदेशों में ही नहीं वरन भारत में भी करोड़ों व्यक्ति

ऐसे हैं जिन तक अपने जीवनों को उन्नत और शान्तिमय बनाने के लिए वैदिक धर्म और आर्यसमाज के अचूक उपायों के सन्देश नहीं पहुंच पाए हैं। वे अब तक रूढ़िवाद की बीसियों कुरीतियों के अन्धकार में फंसे पड़े हैं। उनको सत्यार्थ प्रकाश का जीवनोपयोगी प्रकाश आपका साप्ताहिक जन-ज्ञान पहुंचाए यह बड़े गौरव और हर्ष की बात होगी। वैदिक साहित्य को लाखों की संख्या में छपवाने और सस्ते दामों में वितरण करने का अनुपम श्रेय आपको पहले ही प्राप्त है। यह साप्ताहिक उसे और चार चाँद लगाएगा। मैं आशा करता हूं कि आप महर्षि की भावनाओं का प्रचार और प्रसार करने में आगे ही आगे बढ़ते जाएंगे। प्रभु से प्रार्थना है कि धर्म और सेवा के पुण्य कार्य को भलीभाँति सम्पन्न करने की आपको अपार शक्ति प्रदान करे जिससे देश और जाति का उद्धार हो।

शुभचिन्तक
देसराज चौधरी
30-1-76

24, दरियागंज, दिल्ली

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—दिग्दर्शनानन्द

ढोल की पोल

"देख लिया न संगठन के कर्णधारों का कमाल। दिए न सारे कसबल निकाल। लम्बे-चौड़े तने शामियाने। हजारों नहीं लाखों आए थे अपनी श्रद्धा जताने। खूब हुई घोषणाएं, और बनी योजनाएं। वह भी कितनी सुन्दर जो भी पढ़े पढ़कर उसकी आंखों में छा जाए खुशियों का समुन्दर।" कुरीतियों पर दुधारा है वह कितना प्यारा नारा और तो और उस समय तो मच गया था वाह वाह का शोर जब लगाकर अपनी संपूर्ण संचार वायु का जोर कौए बेचारे ने भी बनकर मोर। बड़े जोर से की घोषणा मैं जातिवाचक संज्ञा का त्याग करता हूं। संगठन में एकता की स्थापना की जाएगी। नए मन्दिर खड़े किए जायेंगे। झगड़े हम मिटाएंगे। संगठन में एकता की मांग बढ़ायेंगे। क्या आपको इस सबसे नहीं हुआ हर्ष। अब भी कह सकते हो कि सफल नहीं हुआ हमारा सौ साला वर्ष।"

सदानन्द जी बड़ी विश्वास पूर्ण मुद्रा में जिज्ञासानन्द को बताया और अपने कर्णधारों के क्रियाकलाप का गुण गाया।

किन्तु जिज्ञासानन्द जी तो ठहरे जिज्ञासु, बड़े ही पूरे ज्ञान पिपासु। अतएव बोल उठे "तो कुछ आपने है बताया और जताया वह सुख तो गुरु देव के लाखों भक्तों को देखकर हमने भी है पाया। किन्तु अभी भी हमारी जिज्ञासा है और आप से ही समाधान की आशा है। कृपया हमारी ये शंकाएं भी तो निवारिए। हमें भी तनिक अपने उजले वस्त्रों की चमक-दमक से निखारिए।

सदानन्द जी बोल उठे। कानों में मिश्री घोल उठे "हां, हां फरमाइए क्या शंका है, श्रीमान की तनिक बताइए।"

जी, पहली शंका तो यह है कि जो लाखों थे आए उन्होंने सैकड़ों खर्च किए परन्तु क्या पाया? यह तो आपने नहीं बताया। फिर जिन्होंने प्रसिद्धि परांगमुखता का उद्घोष लगाया, जाति वाचक संज्ञा के त्याग का नाद गुंजाया उनका नाम इस घोषणा के बाद भी जहां कहीं देखने में आया वहां उसी संज्ञा को साथ जुड़ा पाया। उस दिन वे मन्दिर मैदान हाल में पधारे तो सूचना पत्रक में गए पुराने नाम से ही गए पुकारे। उन्होंने न किया इसका कोई विरोध। तो यह घोषणा कोरी घोषणा ही थी सच्चाई यह तो बताइए, यही है मेरा अनुरोध। रही संगठन में एकता की स्थापना की बात। इसमें ही हमें हो गई कुछ शंका। क्योंकि कुछ तो गए थे न्यौते। नाम भी गए थे उनके छपवाए। किन्तु ऐन टाइम पर वे नहीं गए बुलाए। उनके स्थान पर नए सूचना पत्रक गए छपवाए। इसका कारण तो बताइए तनिक हमारा ज्ञान बढ़ाइए। और उन्होंने कहा है कि हम नए मन्दिर बनवाएंगे। किन्तु अनेक जो हैं पुराने—उनमें पड़े हैं ताले। कई में चले अभियोग बनकर महारोग लगवा रहे है जाले। उनकी स्वच्छता और पावनता की दिशा में भी कुछ दिया जा रहा है ध्यान या ऊंची लगाकर दुकान बेचकर फीके पकवान ही हो गया है उनका, आपका समाधान।

'अरे भाई जिज्ञासानन्द। आपको तो है मीन मेख की बीमारी।" शंकाओं के अम्बार से सकपकाए सदानन्द जी बोल रहे थे। यद्यपि उनके वाणी के स्वर कुछ डोल रहे थे। आगे लगे कहने "भाई अब जरा देखते जाइए। अभी अभी तो थके मांदे हैं बेचारे। कुछ विश्राम कर लें ये कर्णधार हमारे। फिर सब करेंगे ठीक। डेढ़ करोड़ की है योजना। अभी तो लाखों ही है बना। जब आ जाएगा धन, तो फिर लगाकर अपना मन, ये हो जाएंगे जाति हित अर्पण। रही पुराने मन्दिरों की बात उनको फिर लगाएंगे हाथ। अभी तो नयों की ही है चर्चा और उनमें भी होगा खर्चा। अतः चाहिए राशि। बिना राशि के कैसे होगा काम। तनिक दीजिए अपनी वाणी पर लगाम। उन्हें करने दीजिएगा काम।"

जी हम भी तो यही चाहते हैं कि हो काम। किन्तु पहले जो एकत्रित होती रही हैं राशियां। यह तो बताइए कि वे आई हैं किस काम। रही बात कि इन्हें चढ़ी है थकान। उसका कोई कारण तो समझाइए। ये तो चले नहीं पैदल। उड़न खटोले में की यात्रा भी शीत ताप नियन्त्रियता में विराजे। जहां भी गए वहां फैलाई झोली और फिर भांति-भांति की बोलियां बोली। न हल्दी लगी न रोली गुरु भक्तों की श्रद्धा का उठाकर लाभ। दी उनकी दुखती रग दाब। हम पूरा करेंगे ऋषिवर का ख्वाब। अतः दे दो हमें दान। हम तो याचक हैं श्रीमान का किया आह्वान्। वे लोग अब तक रहे हैं भरते झोली और ये बनाते रहे योजना पोली। इसीलिए तो उठती है ये शंका कि कहीं बजता ही न रहे डंका और फिर दोहराई जाए पुरानी कहानी। अब तो देश में आया है नया युग इसमें तो कथनी व करनी में ऐक्य का जमाना है यही हमारा आपके कर्णधारों से है अनुरोध और तो कोई नहीं है विरोध।"

"भइया सदानन्द! आप लीजिए आनन्द। हम तो हैं सत्य के प्रति अनुरक्त। नहीं किसी के संग भक्त। यदि ये कथनी करनी में एकता लाएंगे तो हम भी इनका गुण गाएंगे। अन्यथा हमें जैसा गुरु देव का फरमान है, उसका हमें ज्ञान है कि हम समाज को भलाई के लिए जहां समझेंगे उनकी उठाएंगे। सही होगा सानुरोध कहेंगे। होगा तो ध्यान दिलाएंगे।"

जिज्ञासानन्द कह ही रहे थे कि सदानन्द न जाने कब के और किधर को विलुप्त हो गए।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

हार्दिक शुभ कामना :

प्रचार के साधनों में समाचार पत्र का प्रमुख स्थान रहता है। समाचार पत्र के अन्तर्गत दैनिक ही नहीं, साप्ताहिक, पाक्षिक, मासिक, सभी प्रका के प्रकाशन आ सकते हैं। दैनिक पत्र संवाद प्रधान होता है और इसमें राजनैतिक व आर्थिक समाचार अधिक रहते हैं। साप्ताहिक पाक्षिक व मासिक पत्र विचार प्रधान होते हैं और उनमें राजनैतिक, आर्थिक व धार्मिक विषयों पर लेख और विचार अधिक रहते है। आर्य्यसमाज के पास अपना दैनिक पत्र कोई नहीं है। हां! आर्यसमाजियों के निजी दैनिक पत्र अवश्य हैं। हैदराबाद सत्याग्रह के अवसर पर 'दिग्विजय' दैनिक पत्र का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ था जो सत्याग्रह की समाप्ति के साथ ही कुछ काल पश्चात् बंद कर दिया गया। लगभग २२ वर्ष पूर्व आर्य्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश ने श्री पं० भारतेन्द्रनाथ जी के सम्पादन में दैनिक 'आर्य मित्र' का प्रकाशन आरम्भ किया था। ११ मास तक बड़ी सफलता के साथ यह पत्र चलता रहा। किन्तु दैनिक पत्र के लिए अपेक्षित साधनों के अभाव में यह पत्र भी बन्द हो गया।

इस समय आर्य्य जगत् में कई साप्ताहिक व मासिक पत्र निकल रहे हैं। उनमें से कुछ व्यक्तिगत हैं और कुछ आर्य्य प्रतिनिधि सभाओं के आधीन हैं। आर्य्यसमाज में आर्थिक दृष्टि से अल्प आय वाले लोगों का ही बहुमत है। अतः अर्थन्यूनता के कारण हमारा कोई भी साप्ताहिक पत्र विपुल साधन सम्पन्न संस्थानों से प्रकाशित होने वाले हिन्दी पत्र 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान' या 'धर्म युग' के स्तर का नहीं हो सका।

अर्थभाव की न्यूनता को कुछ सीमा तक योग्य सम्पादन से दूर किया जा सकता था। किन्तु यहां उसका भी अभाव सा ही है। स्वर्गीय पं० हरिशंकर जी शर्मा की सम्पादन योग्यता पर हम सही अर्थों में गर्व कर सकते थे। वर्त्तमान में केवल श्री पं० भारतेन्द्रनाथ जी हैं, जिनकी सम्पादन कला, सूझबूझ व लेखनी का लोहा आर्यसमाजी ही नहीं वरन् इतर व्यक्ति भी उसे स्वीकार करते हैं। लगभग ७ वर्ष पूर्व आपने अर्थाभाव होते हुए भी हुए भी आर्यजनता के सहयोग के विश्वास पर जनज्ञान मासिक का प्रकाशन आरम्भ किया था।

इस अवधि में अर्थाभाव तो लगातार बना ही रहा, पर साथ ही कई बार महीनों तक शारीरिक रोगों ने भी पीछा नहीं छोड़ा। इन विषम स्थितियों में श्रीमती पंडिता राकेश रानी के कुशल निर्देशन में तथा आर्य जनता के सहयोग के कारण यह मासिक पत्र नियमित रूप से प्रकाशित होकर पाठकों की सेवा में पहुंचता रहा। साज सज्जा, पाठ्य सामग्री तथा प्रसार की दृष्टि से आर्यजगत् में यह सर्वोत्कृष्ट पत्रिका है। इसके लिए आदरणीय पं० भारतेन्द्रनाथ जी समस्त आर्यजगत् की बधाई के पात्र हैं।

अब यह जनकर, कि जनज्ञान मासिक का साप्ताहिक संस्करण निकाला जा रहा है, अति प्रसन्नता हुई। आर्यसमाज शताब्दी वर्ष के उपलक्ष्य में आयोजित समारोहों की सफलता में जनज्ञान मासिक का बहुत बड़ा योगदान रहा है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि यदि यह पत्रिका आर्यजनता में प्रेरणा न फूंकती तो समारोहों की सफलता सन्दिग्ध ही रहती।

शताब्दी वर्ष अपने अन्तिम चरण का ओर अग्रसर है। ऐसे समय पर साप्ताहिक जनज्ञान का प्रकाशन शताब्दी की सबसे बड़ी उपलब्धि सिद्ध होगी, इसमें कोई सन्देह नहीं है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि आर्यजनता पूर्ववत् इस पत्र को अपना पूर्ण सहयोग प्रदान करेगी और यह पत्र महर्षि दयानन्द जी के स्वप्नों को मूर्त रूप देने में अहर्निश अपना योगदान देता रहेगा।

रत्नसिंह एम० ए०
अध्यक्ष दर्शन शास्त्र विभाग
महानन्द मिशन कालेज, गाजियाबाद

(पृष्ठ १२ का शेष)

अब कामेश्वरी प्रश्न पूछा करती थी, सुन्दरम् नहीं। "इतनी देर क्यों हुई?" "कहाँ गये थे?" "उस दिन के रुपयों का क्या हिसाब है?" ये होते थे कामेश्वरी के प्रश्न, और सुन्दरम् ने कभी उससे इनके बदले में कोई प्रश्न नहीं किया। वह कामेश्वरी से केवल एक ही प्रश्न करना चाहता था और वह प्रश्न पूछने के लिये उसे अधिक प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ी। एक दिन उसने अपना साहस बटोर कर कामेश्वरी से पूछ ही तो लिया, "कामेश्वरी, और बातों को तो छोड़ो, अब यह बताओ कि विवाह के पूर्व तुमने मुझे इतना जलाया क्यों? सारी दुनियां से निराली शर्त तुमने क्यों रखी थी?

"इसी लिये कि आप किसी प्रकार बी० ए० पास कर लें। जब मैं बी० ए० पास हूं तो आपका बी० ए० पास न होना, क्या मेरे लिये शर्म की बात नहीं है? आप पढ़ने में दिल लगावें, इसलिये मैंने यह नाटक रचा था," अब इच्छा पूर्ण हुई।

सत्यार्थ—प्रकाश का प्रचार कर सच्चे रूप में शताब्दी मनाइएं

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—राधेश्याम आर्य

मूर्तिपूजा और भारतीय जीवन

●●●

ईश्वर के स्वरूप अस्तित्व और उपासना के संबंध में विचारकों और दर्शनकारों ने अनेकों मतों का प्रतिपादन किया है। कौन सा मत श्रेष्ठ है इस पर विचार करने की अपेक्षा यदि यह जानना चाहें कि कौन सा मत सत्य है तो हम किसी निष्कर्ष पर पहुंच सकेंगे। अतः प्रथम ईश्वर के स्वरूप का निरूपण और पश्चात उपासना और वर्तमान स्थिति पर विचार करेंगे।

ईश्वर अथवा ब्रह्म के संबंध में वैदिक मत है कि ब्रह्म कविर्मनीषी परिभूः और स्वयं भू है वह आनन्दमय है, वह विज्ञानमय है (विज्ञानमानदम्) इतना ही नहीं (तच्छुभ्रं ज्योतिषां ज्योतिः) वह शुभ्र और ज्योति की भी ज्योति है। ईश्वर सर्व व्यापक, सर्व शक्तिमान है वह अशरीरी है उसे एकदेशीय नहीं कहा जा सकता। उसको हम सातवें आसमान पर या किसी देश विशेष में सीमित नहीं कर सकते। वह देशकाल और परिस्थितियों से सीमित नहीं है। वह एक वस्तु, मूर्ति या स्थान अथवा काल विशेष में अस्तित्ववान नहीं हो सकता। वह तो सम्पूर्ण विश्व में व्यापक है (कर्माध्यक्षः सर्व भूताधिवासः साक्षी यतो निर्गुणश्च। श्वेताम्बर उपनिषद ६-१९) ईश्वर सब वस्तुओं में निवास करने वाला, सबमें व्यापक, सब प्रमाणों का प्रमाण, सबके अस्तित्व का साक्षी, सबका आधार, एकमात्र चैतन्य और निर्गुण है।

इस प्रकार ईश्वर के स्वरूप का निरूपण करने पर बहुत सी शंकायें सामने आती हैं। जैसे निराकार ईश्वर साकार की सृष्टि किस प्रकार करता है ? यदि वह सर्व शक्तिमान है तो क्या वह रूप धारण नहीं कर सकता ? जब वह सबमें विद्यमान है, सर्व व्यापक है तो वस्तुओं के अलग-अलग अस्तित्व होने से ईश्वर अनेक में विभाजित नहीं हो जाता ? निराकार ब्रह्म की उपासना किस आधार को मानकर की जाये, आदि।

उक्त शंकाओं से हमको साकार, सगुण और सीमित ब्रह्म के स्वरूप पर विचार करने का अवसर मिलता है। यदि ईश्वर को हम सशरीरी, अवतारी और एकदेशीय मानलें तो कई आपत्तियां उपस्थित होती हैं। यदि वह शरीरी है तो उसका स्वरूप क्या है ? यदि वह मनुष्य जैसी आकृति का है तो पशुओं का ईश्वर पशु आकार का होगा। वह कब पैदा हुआ ? जब वह पैदा नहीं हुआ था तो ईश्वर कहां था ? वह क्यों पैदा हुआ ? क्या इससे पूर्व उसकी आवश्यकता नहीं थी ? वह किसने पैदा किया और कब तक जीवित रहेगा ? पैदा होने के बाद वह कहां रहता है और इससे पूर्व वह कहां रहता था ? यदि ईश्वर को हम एकदेशीय मानलें तो अन्य स्थानों में उसका अभाव हो जावेगा। यदि एक समय और परिस्थिति में सीमित मान लें तो वह सर्व शक्तिमान न रह सकेगा और न सर्वव्यापक रह सकेगा। ईश्वर निराकर होते हुए भी साकार की सृष्टि कैसे करता है इस संबंध में बहुत सीधा विचार यह है कि विचार निराकार होता है और साकार वस्तुओं के निर्माण का कारण होता है। वस्तु वैभिन्नता से ईश्वर का विभाजन नहीं होता, क्योंकि आकाश एक तत्व और अग्नि एक तत्व है। सभी रूपवान वस्तुओं में विद्यमान होने से तत्व के रूप का विभाजन नहीं होता ठीक इसी प्रकार ईश्वर भी अविभाज्य और सर्व व्यापक हैं। ईश्वर की उपासना, पूजा या स्तुति के संबंध में जब हम विचार करते हैं तो अनेकों मत मतान्तर दिखाई देते हैं जैसे जुरूस्थ, ईसाई, मुसलमान, यहूदी, मूर्तिपूजक आदि इस समय सब पर विचार न करके केवल मूर्ति पूजा पर विचार किया जायेगा। मूर्ति पूजा ईश्वर की सच्ची उपासना नहीं है यह एक भ्रम मात्र है अपने मन को और आत्मा को धोखा देना है कि हम ईश्वर की उपासना कर रहे हैं। क्योंकि मूर्ति ईश्वर का सत्य स्वरूप नहीं है। वह तो हमारी या किसी शिल्पी की कल्पना मात्र है। मूर्ति की जब हम उपासना करते हैं तो हमारे मनः पटल पर मूर्ति का प्रतिबिम्ब उपस्थित होता है। जेस्टालू मनोवादी के विचारानुसार जब कोई वस्तु हमारे प्रत्यक्ष का विषय बनती है तो उसकी आकृति मन पर आती है ऐसा उन्होंने कहा है। जब हम मूर्ति को मन के ध्यान या एकाग्रता अथवा प्रत्यक्ष का विषय बना लेते हैं तो मन ईश्वर के स्वरूप से अलग होकर विषयी हो जाता है और ईश्वर की प्रतीति की अपेक्षा मूर्ति हमारे मन में उपस्थित होती है। अतः जब तक मन में कोई विषय बना रहेगा मन का विलय नहीं होगा। बुद्धि क्रियाशील और निर्णायक बनी रहेगी। अहं भावना का अस्तित्व बना रहेगा, इसलिए आत्मा के स्वरूप को जानने में कठिनाई होगी। क्योंकि मन बुद्धि और चित्त में मूर्ति विषय के रूप में उपस्थित है। अतः मनः क्रिया (Mental Process) मूर्ति का प्रत्यक्ष करेगी ईश्वर का नहीं। ईश्वर की उपासना में इसलिए मूर्ति माध्यम का कार्य नहीं कर सकती क्योंकि ध्यान का विषय मूर्ति है ईश्वर नहीं। अतः ईश्वर की उपलब्धि असंभव होगी। इसलिए यह स्पष्ट है कि मूर्ति पूजा ईश्वर की उपासना नहीं, केवल मूर्ति मात्र की उपासना है।

मूर्ति केवल ऐन्द्रिक विषय है वह हमको अतीन्द्रिय

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

स्थिति एक अर्थात् इन्द्रिय अन्य प्रतीति से ऊपर उठकर अतीन्द्रिय आत्म तत्व का साक्षात्कार नहीं करा सकती। इस मनोभौतिक (Psychophysical) सत्य से इन्कार नहीं किया जा सकता। अतः ईश्वर उपासना में मूर्ति सहायक नहीं बाधक है। वह मन की ओर इन्द्रियों को सक्रिय रखती है अपने तक सीमित रखती है। वह ईश्वर की सर्व व्यापकता और सर्व शक्तिमत्ता की अनुभूति नहीं करा सकती। वह जगत् और आत्मा के बीच मनः व्यापारों को और इन्द्रिय सम्पर्क को सक्रिय रखती है जिसमें सत्य को भ्रम मय रूप से कल्पना करने का दोष आरोपित होता है और सत्य से दूर केवल मूर्ति मात्र में ही मन उलझ कर रह जाता है। मूर्ति पूजा ने केवल मानव मन को भ्रम में ही नहीं डाला वरन् अन्य और हानियाँ भी पहुंचाई हैं जिनमें से कतिपय हानियों पर संक्षेप से यहां विचार किया जायेगा।

मूर्तिपूजा ने बहुदेववाद को प्रोत्साहन दिया है। जिस शिल्पकार के मन में जो कल्पना उठी वही मूर्ति बनाकर खड़ी कर दी और उसमें किसी भी देवी शक्ति का आरोपण कर दिया जैसे शंकर, विष्णु ब्रह्मा, वाराह, नरसिंह, काली, महाकाली, भैरवी, गणेश आदि। कहां तक नाम गिनाये जायें। बस इन मूर्ति पूजकों ने अनेकों देवी देवता ईश्वर के 'एजेन्ट' बनाकर खड़े कर दिये और ईश्वर से दूर ले जाकर एक भ्रम मय स्थिति उपस्थिति कर दी, जिसके परिणाम स्वरूप सत्य पर आवरण पड़ गया और ईश्वर से दूर देवी देवताओं की पूजा करने लगे।

मूर्तिपूजा ने चमत्कार को प्रोत्साहन दिया। किसी को स्वप्न हनुमानजी देते हैं तो किसी को कालीजी स्वप्न देती हैं। किसी के सर महाकाली आती हैं। किसी विशेष मंदिर की मूर्ति में विशेष चमत्कार है आदि भ्रम पूर्ण धारणाओं को देश में प्रचारित किया गया। लोग चमत्कार को नमस्कार करने लगे। आज भी लोग भटकते फिरते हैं। कोई बद्रीनाथ जाता है, कोई विश्वनाथ के मंदिर में जाता है कोई द्वारिका में भगवान ढूंढ रहा है, परन्तु ईश्वर इस प्रकार नहीं मिल सकता। यह सारी बातें आज देश को कितना गुमराह करके हानि पहुंचा रही हैं इसकी कल्पना नहीं की जा सकती। लोग अन्धकार में कितने भटकते फिरते हैं इसकी कल्पना कितनी भयावह है।

मूर्तिपूजा ने देश में फूट फैलाई। शाक्तों ने शैव्यों का विरोध किया, शैव्यों ने वैष्णवों का विरोध किया। कोई विष्णु को बड़ा मानता है, कोई महाकालीको बड़ा मानता है इसी आधार पर लोगों में मतभेद और विचार वैभिन्नता तथा वैमनस्य उत्पन्न हुआ। तुलसी जैसे संत को भी भ्रम हो गया और उन्होने कृष्ण मूर्ति को देखकर कहा।

कित मुरली कित चन्द्रिका कित गोपिन को साथ।
तुलसी मस्तक जब नवै धनुष बाण लेउ हाथ॥

मूर्ति पूजा ने भ्रष्टाचार को प्रोत्साहन दिया। कृष्ण के विभिन्न रूपों में अपनी वासना की तृप्ति के लिए मूर्ति पूजकों ने उपासना की आड़ में क्या नहीं किया? मंदिरों में भ्रष्टाचार की सीमा ही नहीं रही। सीता जी को गौरी पूजन के समय राम छिपकर देखने लगे। कृष्ण ने मंदिरों से कितनी रुक्मणियों का अपहरण नहीं किया? कितने मंदिरों में देव दासियां वासना की कीड़ियों के रूप में नहीं रहीं। आज जन्माष्टमी पर कितने मंदिरों में वेश्याओं का नृत्य होता है यह क्या भ्रष्टाचार नहीं है। भांग पीने वाले शंकर चरस पीने वाले शंकर किसी से छिपे नहीं हैं। डकैत अपनी प्रिय उपासिका काली को मानते हैं। शिवलिंग उपासना क्या मानसिक वासना का प्रतीक नहीं है? क्या फ्रायड का विचार शिवलिंगोपासना पर आरोपित नहीं होता।

मूर्तिपूजा ने हिंसा को प्रोत्साहन दिया। विध्यंवासिनी काली कलकत्ते वाली महाभैरवी आदि कितने जीवों की जानें ले चुकी है। क्या यह बात उपेक्षणीय है कि जो ईश्वर स्वयं सृष्टिकर्ता है क्या वह अपनी संतानों को स्वयं सर्प की भांति भक्षण कर जाना पसन्द करेगा? क्या ईश्वर अपने पुत्रों की बलि से प्रसन्न होगा?

मूर्तिपूजा ने अकर्मण्यता को प्रोत्साहन दिया। लोग मूर्ति को पूजकर अपने बाहुबल को भुलाकर ईश्वर से अपनी समस्या को हल करवाना चाहते हैं। फलफूल चढ़ाकर और वह भी चोरी और अन्याय की कमाई ईश्वर पर चढ़ाकर अपनी सफलता ईश्वर के द्वारा चाहते हैं। मूर्ति पूजा इस प्रकार आत्म विश्वास से दूर ले जाती है मूर्ति पूजा व्यक्ति को अकर्मण्य और निष्क्रिय बनाती है। भगवान के भरोसे जीने के लिए जीवन का निराशावादी दृष्टिकोण उपस्थित करती है। अतः मूर्तिपूजा उपयोगी नहीं दिखाई देती। देश पर विदेशियों के आक्रमण हुए और मूर्ति पूजक हाथ पर हाथ रखे भगवान के भरोसे बैठे रहे। भगवान अपना त्रिशूल लेकर न आये और देश दासता की जंजीरों में जकड़ गया।

मूर्तिपूजा ने देश को गढ़े में ढकेल दिया है। आज आर्य जाति कितने वर्गों में बंटकर भ्रमों और फूट का शिकार बन गई है। एक नेतृत्व से निकलकर कितने भेदभाव युक्त विचारों के अधीन हो गई है। इसलिए कितनी शक्तिहीन और लोगों के उपहास का विषय बन गई है। आज देश पर आये हुए घटाटोप बादल अनेकों षड़यंत्र और अपरिपक्व विचार छा गये हैं हम सत्यमार्ग से विचलित हो गये हैं, क्योकि मूर्ति पूजा ने हमें अनेकों विभागों में बांटकर अनेकों भ्रमों में डालकर सत्य के निरूपण से दूर ले जाकर खड़ा कर दिया है। हमें फलाकांक्षा से इतना संलग्न कर दिया है कि हम भले बुरे की पहिचान भूल गये हैं सत्य का चुनाव करने में असमर्थ हो गये हैं। हम क्या थे यह

(शेष पृष्ठ ३६ पर)

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

महोदय,

आर्यसमाज का शताब्दी समारोह सब प्रकार से सफल रहा है। एतदर्थ आर्य-जनता बधाई की पात्र है। इस अवसर पर जो अनेक प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकृत किये गये हैं, उनमें एक यह है—कि "दहेज लेने-देने को सारे राष्ट्र में अपराध घोषित किया जाय।" मेरी सामान्य सम्मति में यह वेदविरुद्ध तथा महर्षि दयानन्द के मन्तव्य के विपरीत है। कारण लीजिये—

१—विवाह संस्कार के समय वर की स्वागत पद्धति= आसन, जलादिप्रदान और मधुपर्क द्वारा सत्कार के पश्चात्—'ओं गौर्गौः प्रतिगृह्यताम्' इस वाक्य से वर की विनती करके कन्या अपनी शक्ति के योग्य वर को गोदानादि द्रव्य, जो कि वर के योग्य हो, अर्पण करे और वर 'ओं प्रतिगृह्णामि' इस वाक्य से उसको ग्रहण करे।, इस वचन को महर्षि दयानन्द ने पारस्कर गृह्यसूत्र, काण्ड १, कडिका ३ से उद्धृत किया है। इससे सिद्ध है कि कन्या अपनी शक्ति के अनुसार गौ तथा अन्य द्रव्य धन, बर्तन आदि की भेंट वर को देवे तथा वह भेंट वर के भी योग्य हो। यह रीति दहेज कहलाती है।

२—लाजाहोम (इस विधि को सामान्य जनता में फेरे—भाँवर डालना कहा जाता है। उस समय आगे लिखा मन्त्र वधू की हस्तांजलि को पकड़ कर वर बोलता है—

ओं तुभ्यमग्रे पर्यवहन्त्सूर्या वहतुना सह।
पुनः पतिभ्यो जायां दा अग्ने प्रजया सह॥

ऋग्वेद, मण्डल १०, सूक्त ८५, मन्त्र ३८॥

इस मन्त्र में सूर्या का अर्थ वधू और वहतुना पद का अर्थ दहेज है। अर्यसमाज के स्वर्गीय चतुर्वेद-भाष्यकार श्री पं० जयदेव शर्मा विद्यालंकार मीमांसातीर्थ इस मन्त्र का ऐसा अर्थ करते हैं—

हे (अग्ने) अग्नि के तुल्य तेजस्विन्! (तुभ्यम्) तेरे (अग्रे) आगे, तेरी समक्षता में (वहतुना सह) लोग दहेज आदि सहित (सूर्याम्) पुत्रोत्पादन समर्थ कन्या को (परिअवहन्) परिक्रमा द्वारा वहन्, धारण करते, तेरी साक्षिता में विवाह करते हैं (पुनः) और तू (पतिभ्यः) पालक जनों को (प्रजया सह) उत्तम सन्तान सहित (जायां दाः) स्त्री प्रदान कर, अर्थात् विवाहित पुरुष को उत्तम सन्तान से सम्पन्न कर।

इस मन्त्र से स्पष्ट है कि दहेज लेना-देना वेदानुसार कर्म है। अपराध नहीं है। परन्तु महर्षि दयानन्द के मन्तव्यानुसार कन्या अपनी शक्ति का और वर की योग्यता का ध्यान अवश्य रक्खे।

३—सन् १९५० ई० २० मार्च के दिन जिला मुजफ्फरनगर के सोरम ग्राम में भारतीय सर्वखाप पंचायत का महा अधिवेशन हुआ था। उसमें ५० हजार की संख्या में जनता उपस्थित थी। तब विवाह की कुरीतियों को दूर करने के सम्बन्ध में जो प्रस्ताव सर्व सम्मित से पारित किये थे, उनमें एक यह था, 'लड़के वाला अधिक से अधिक ३ तोले सोना और २५ तोले चान्दी तथा लड़की वाला १ तोला सोना तथा ५ तोले चान्दी दे सकता है। अधिक आभूषण बन्द किये जाते हैं।' उस महा अधिवेशन में यह विनीत लेखक सर्वसम्मित से प्रधान निर्वाचित किया गया था और इस समय भी प्रधानका कार्य कर रहा है।

अतः आर्यजगत् के पूज्य वेदज्ञ विद्वान् दहेज लेने-देने को अपराध न मानें। परिमित मात्रा से अधिक लेने-देने वाले को दण्डित किया जावे। यह नियम ठीक है। आशा है आप महानुभाव सरकार को सही मार्ग का निर्देश करेंगे।

—जगदेवसिंह सिद्धान्ती
प्रधान, भारतीय सर्वखाप पंचायत

(पृष्ठ ३८ का शेष)

हम जानने में असमर्थ हो गये हैं। जो आज की परिस्थिति है उसकी बहुत बड़ी जिम्मेदारी मूर्ति पूजा पर है मूर्ति पूजा एक अभिशाप बनकर रह गई है इसने हिन्दुओं को ही नही मुसलमानों को भी बुत परस्ती की ओर कब्र पूजा के रूप में घसीटा है। अतः मूर्ति पूजा ईश्वर की उपासना नहीं वरन् ईश्वर से दूर ले जाकर भ्रम में डालने वाला एक भ्रमपूर्ण मार्ग है आज भी अगर हम चेत जायें तो बहुत सी कठिनाइयों से बच सकते हैं।

मंगाइए : 'आर्यसमाज का भविष्य'

[एक चेतावनी]

इस पुस्तिका के विद्वान् लेखक आचार्य दत्तात्रेय वाब्ले ने आर्यसमाज की वर्तमान स्थिति का आत्म-विश्लेषण करके एक गम्भीर चेतावनी दी है कि 'हिन्दू धर्म' से पृथक रहकर ही आर्यसमाज का अस्तित्व बना रह सकता है।

पुस्तक मिलने का स्थान : आर्यसमाज, अजमेर

मूल्य : एक रुपया।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अपने आपको समझिए !

केनेडा के मान्ट्रियल विश्वविद्यालय के डा० हान्स सेलेई का कथन है कि आप चाहे जितना खाएं पिएं और कितने ही स्वस्थ क्यों न हों, किन्तु यदि आप सयाने होने पर भी अपनी समस्याओं का बाल सुलभ ढंग से समाधान खोजने का प्रयास करेंगे तो आपके मानसिक तनाव में वृद्धि ही होगी और उसके कुप्रभाव एवं बुद्धि विकार से आप स्वयं को बचा नहीं पाएंगे।

उनकी दृष्टि से इन बचकानी हरकतों एवं मानसिक तौर पर अस्वस्थता के जो लक्ष्य सामने आते हैं वे हैं—

(1) अरुचिकर परिस्थितियां, (2) कल्पना लोक में विचरण करते हुए ख्याली पुलाव पकाना, (3) समाज के प्रति विद्रोह की भावना, (4) हीनता के भाव से ग्रसित रहना, (5) श्रेष्ठता के भाव से ग्रसित रहना, (6) यौन भावगा के कारण मानसिक उहापोह।

बड़े होने पर आप अपनी इन शारीरिक दुर्बलताओं को समझकर तदुपरान्त अपना जीवन नियोजित कीजिए। इसके साथ ही इस बात को ध्यान में रखिए कि कहीं आप अपनी दुर्बलताओं के परिणामस्वरूप किसी उपयोगी कार्य को, जिसे आप सन्तोषजनक ढंग से कर सकते हैं, करने से पीछे तो नहीं रह जाते हैं।

प्रथमत: आपको अपनी योग्यता का आकलन करना चाहिए। तदुपरान्त उस वांछित दिशा में अपना पग आगे बढ़ाइए, जिसमें आपको यह निश्चय है कि आप अपने विश्वास तथा योग्यता के बल पर उस कार्य को सफलता सहित सम्पन्न कर सकते हैं।

आपके हृदय में दो विरोधी भावनाएं प्रेम और विवाद अथवा विरोध सदैव बलवती रहती हैं। आपको इनमें सतत सन्तुलत बनाए रखना चाहिए। क्योंकि जीवन में ये भावनाएं ही जब परस्पर एक-दूसरे से उलझती हैं और परस्पर टकराती हैं तो जीवन में कटुता का विष घोलकर उसे दुरूह बना देती हैं।

संचार-तन्त्र

संचार तन्त्र के क्षेत्र में केन्द्रीय विद्युत अभियान्त्रिकी अनुसन्धान संस्थान, पिलानी ने असाधारण प्रगति प्रदर्शित की है। दूरदर्शन अभिग्राही का विकास कर इस संस्थान ने ही देश में दूरदर्शन को जन्म दिया है। उससे विदेशी मुद्रा मात्र की ही बचत नहीं हुई। अपितु आत्म निर्भरता तथा गतिशीलता के एक नवीन वातावरण का भी सृजन हुआ है। इस कार्य हेतु भारतीय आविष्कार सम्वर्धन मण्डल ने संस्थान को स्वर्ण पदक और यहां की जानकारी द्वारा टेलीविजन (दूरदर्शन) का उत्पादन करने वाली फर्मों को रजत पदक तथा टेलीविजन प्रोजेक्ट पर कार्य करने वाले वैज्ञानिकों को नकद पुरस्कार भी प्रदान किए थे।

इसके अतिरिक्त यहां टेलीविजन मॉनीटर, टी० वी० कैमरा, दृश्य वितरण प्रबंधक, विक्षेप घर-घर सरीखे विक्षेपक, कुण्डली उच्च वोल्ट वाले, ट्रांसफार्मर एवं भिन्न-भिन्न प्रकार के टेलीविजन एंटेना तथा सामुदायिक एंटेना आदि का विकास कार्य भी हुआ है, और उनका उत्पादन भी जारी है।

प्रेषी अभिग्राही (ट्रांस रिसीवर) की विकास की परियोजना भी महत्वपूर्ण है। खानों की सुरक्षा, सुरक्षा सैनिकों द्वारा दूर तक फैले औद्योगिक संस्थानों एवं रेलवे आहातों के लिए भी ये अभिग्राही नितान्त लाभदायक सिद्ध हुए हैं।

—विज्ञान 'प्रेमी'

बच्चों की साईकिल

साइकिल जिसके पहिए तीन
चढ़ बैठे दीपू शौकीन
साइकिल दौड़ी, ताबड़तोड़
हट बबलू तू रास्ता छोड़
बजती घंटी टन-टन-टन
दूर हटो बच्चो सब जन
गद्दी उसकी है रंगीन।
साइकिल जिसके पहिए तीन ॥
छोटे नन्हें नन्हें हाथ
काजल सोहे गोरा गात
तुतले बोल रही है बोल
नन्हें भइया रस्ता छोल
खाली कर बबलू की जेब
दीपू लाई टाफी छीन।
साइकिल जिसके पहिए तीन ॥
साइकिल दौड़ी, जैसे कार
कैसे कोई जाता पार
उड़े हवा में भूरे बाल
दीपू चली हवा की चाल
कोई दौड़े और पकड़ ले
ऐसा कोई नहीं प्रवीण।
साइकिल जिसके पहिए तीन ॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

काशी की शताब्दी को सफल बनाएं

ज्ञान की नगरी में एक बार फिर वेदों का डंका बजे

नई दिल्ली 2 फरवरी, दयानन्द संस्थान के अध्यक्ष पं० भारतेन्द्रनाथ ने देश की समस्त आर्य जनता को आह्वान करते हुए कहा है कि—वह अपनी पूरी शक्ति-सामर्थ्य से २७ से २९ तक होने वाली शताब्दी समारोह को सफल बनाए।

उत्तर प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभा के तत्वविधान में होने वाले इस समारोह की विशेषता बताते हुए आपने कहा कि ज्ञान की नगरी काशी में महर्षि दयानन्द ने अनेक बार सत्य का प्रकाश फैलाने का प्रयत्न किया था अतः आज पूरी शक्ति से ऋषि के उत्तराधिकारियों को काशी में ज्ञान प्रसार के लिए २७ की प्रातः वहां पहुंचना चाहिए।

मेरठ-कानपुर के समारोह राष्ट्र की गौरव परम्परा बन चुके हैं। काशी का यह आयोजन सबसे बढ़-चढ़ कर हो इसके लिए पूरा प्रयत्न सभी को करना चाहिए।

काशी में होने वाले शताब्दी समारोह के लिए अधिक से अधिक धन उत्साह पूर्वक भेजें

काशी ज्ञान की नगरी है। यहां सत्य-ज्ञान वेद का महर्षि दयानन्द का डंका बजाने के लिए २७-२८-२९ फरवरी को विशाल समारोह होने जा रहा है।

धन के अभाव से कार्य न रुके और शताब्दी समारोह अभूतपूर्व हो इसके लिए आर्यजन उदारतापूर्वक अधिक-से-अधिक धन—

श्री पं० प्रकाशवीर शास्त्री, संसद् सदस्य १ कैनिंगलेन नई दिल्ली को चैक, ड्राफ्ट या मनिआर्डर द्वारा भेजें।

—भारतेन्द्र

आर्य समाज शताब्दी पर : दयानन्द संस्थान के

अनुपम उपहार

वन्दना के स्वर

(सम्पादक श्री क्षेम चन्द्र सुमन)

हिन्दी साहित्य के प्रायः सभी मूर्धन्य कवियों द्वारा महर्षि दयानन्द पर लिखी कविताओं का अनुपम संग्रह।

श्री मैथिली शरण गुप्त, नैपाली, बलवीर सिंह रंग काका, निराला, द्विवेदी, हरिऔध, माखनलाल चतुर्वेदी, आदि सभी सुप्रसिद्ध कवियों की रचनाओं का संग्रह

यह संग्रह सार्वदेशिक सभा ने तैयार कराया था। किन्तु उन्होंने अर्थाभाव के कारण प्रकाशन में असमर्थता प्रगट की—धन हमारे पास भी नहीं था, फिर भी जनता के सहयोग बल पर आप का अपना संस्थान इस ऐतिहासिक महान् साहित्यिक कृति को प्रकाशित कर चुका है।

बड़ा साइज : बढ़िया कागज
पृष्ठ लगभग २५० : मूल्य ८)

डिलक्स लाइब्रेरी संस्करण : १५)

आज ही आदेश भेजें

दयानन्द-संस्थान
नई दिल्ली-५

मुद्रक-प्रकाशक—सम्पादक पंडिता राकेश रानी द्वारा सैनी प्रिन्टर्स दिल्ली छपा

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जन-ज्ञान [साप्ताहिक]
वेद मन्दिर, १५९७ हरध्यानसिंह मार्ग
नई दिल्ली-११०००५। दूरभाष : ५६६६३९

रविवार
१५ फरवरी
१९७६

रजिस्टर्ड नं०
D (C-)

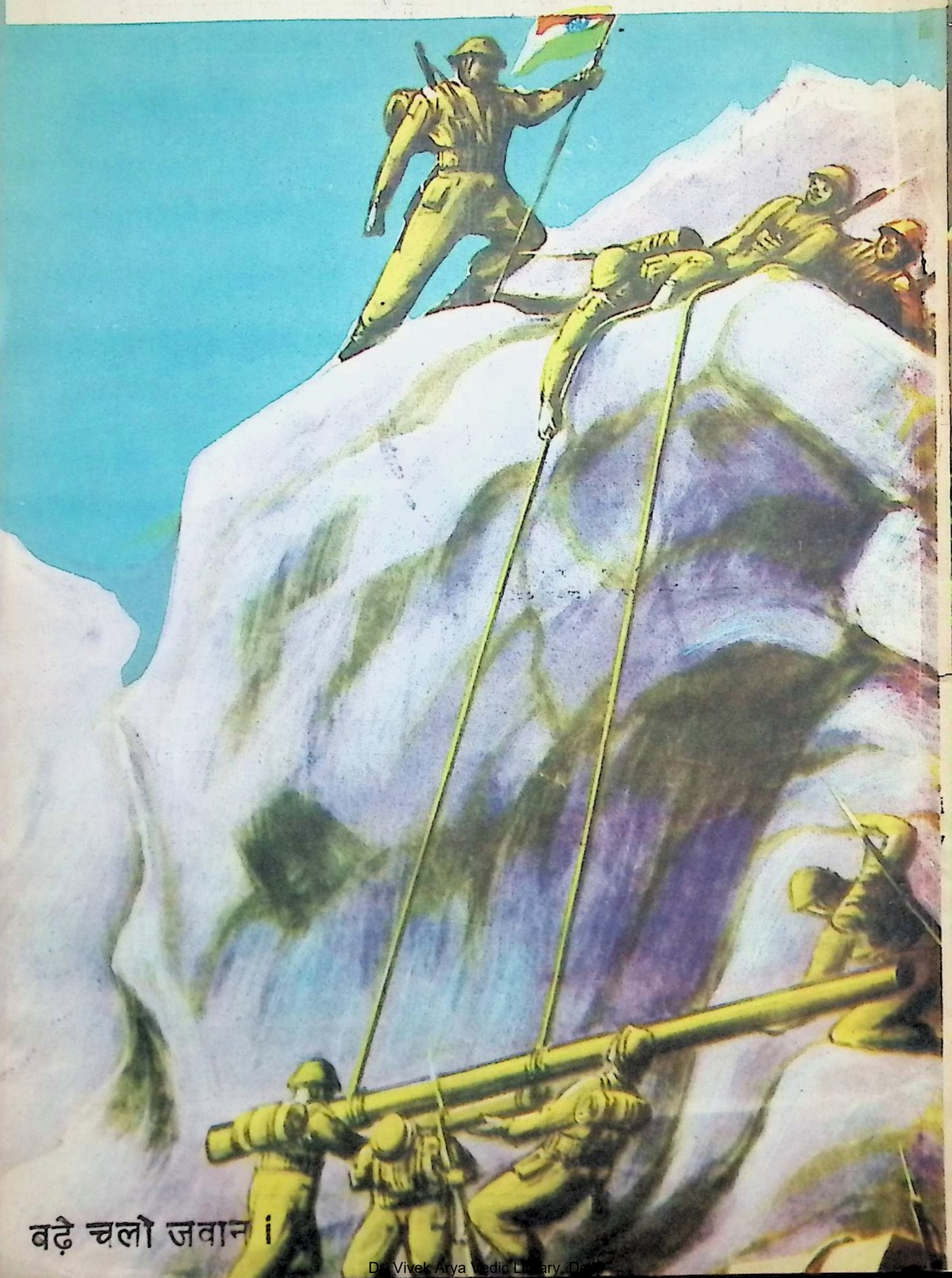

बढ़े चलो जवानो !

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi